रोबो

रीबो...

दिनानाथ मनोहर

हिन्दी रूपान्तर
भगवानदास वर्मा

उन अनगिनत व्यक्तियों के लिए,
जिन्होंने स्वयं वंचित रहकर खोई हुई मानवता
को सुरक्षा के लिए उत्सर बलिदान किया।

आसमान बिलकुल साफ़ था। हवा खामोश थी। वृक्ष स्तब्ध थे। वातावरण निश्चल।

सूरज क्षितिज की ओर झुका था। पेड़ों के साये दूर तक सड़क पर फैले थे। रोड से रेजिमेंट ऑफिस तक का ईंट-रोड़ी का बना रास्ता अलसाया-सा। परे, रेजिमेंट ऑफिस। साफ़-सुथरी सफ़ेद इमारत। कमांडिंग अफ़सर का दफ़्तर। दफ़्तर के दरवाज़े पर खड़ा हुआ संतरी। पेड़ के नीचे जीप। जीप में ह्वील के पीछे बैठा हुआ ड्राइवर।

पूरी दुनिया किसी एक क्षण पर ठिठक गयी है। ज़िंदगी रुक गयी है। यह आकाश, ये पेड़, यह रास्ता, यह बिल्डिंग, यह संतरी, यह ड्राइवर—सब एक तरह की निर्जीव स्थिरता में बँध गये हैं। सिर्फ़ साये धीमी लेकिन निश्चित गति से बढ़ रहे हैं।

कंपनी ऑफ़िस के अहाते में रखी बड़ी मेज़ के पीछे एड्ज्युटेंट कैप्टन काली कुर्सी पर बैठा हुआ है। उसके दायें-बायें हैं कंपनी कमांडर कैप्टन सोहनसिंह और सूबेदार उन्नीकृष्णन। सिर पर तिरपाल की कामचलाऊ छत बनायी गयी है। लेकिन छत की छाँव इन लोगों के पीछे दूर हरी घास पर पड़ रही है। मेज़ के सामने आदमियों की एक लंबी क़तार है। ख़ाकी हाफ़-पैन्ट और लाल पी० टी० शूज़ पहने ये लोग क़तार में आगे खिसक रहे हैं। हरी बनियान में से उनका झुलसा हुआ जिस्म धूप में चमक रहा है। मेज़ के सामने सात-आठ सौ रँगरूट अलग-अलग टोलियाँ बनाकर बैठे

आसमान बिलकुल साफ था। हवा खामोश थी। वृक्ष स्तब्ध थे। वातावरण निश्चल।

सूरज क्षितिज की ओर झुका था। पेड़ों के साये दूर तक सड़क पर फैले थे। रोड से रेजिमेंट ऑफिस तक का ईंट-रोड़ी का बना रास्ता अलसाया-सा। परे, रेजिमेंट ऑफिस। साफ-सुथरी सफ़ेद इमारत। कमांडिंग अफसर का दफ़्तर। दफ़्तर के दरवाज़े पर खड़ा हुआ संतरी। पेड़ के नीचे जीप। जीप में ह्वील के पीछे बैठा हुआ ड्राइवर।

पूरी दुनिया किसी एक क्षण पर ठिठक गयी है। ज़िंदगी रुक गयी है। यह आकाश, ये पेड़, यह रास्ता, यह बिल्डिंग, यह संतरी, यह ड्राइवर—सब एक तरह की निर्जीव स्थिरता में बँध गये हैं। सिर्फ़ साये धीमी लेकिन निश्चित गति से बढ़ रहे हैं।

कंपनी ऑफ़िस के अहाते में रखी बड़ी मेज़ के पीछे एड्ज्युटेंट कैप्टन काली कुर्सी पर बैठा हुआ है। उसके दायें-बायें हैं कंपनी कमांडर कैप्टन मोहनसिंह और सूबेदार उन्नीकृष्णन। सिर पर तिरपाल की कामचलाऊ छत बनायी गयी है। लेकिन छत की छाँव इन लोगों के पीछे दूर हरी घास पर पड़ रही है। मेज़ के सामने आदमियों की एक लंबी क़तार है। ख़ाकी हाफ़-पैन्ट और लाल पी० टी० शूज़ पहने ये लोग कतार में आगे खिसक रहे हैं। हरी बनियान में से उनका झुलसा हुआ जिस्म धूप में चमक रहा है। मेज़ के सामने सात-आठ सौ रँगरूट अलग-अलग टोलियाँ बनाकर बैठे

हुए हैं। उनके पीछे जे० सी० ओ० खड़े हैं।

सुबह से बेचैन करने वाली धूप की तीव्रता अब कुछ कम हुई है। कुछ लोग पालथी मारे घुटनों पर हाथ रखे बैठे हैं। कुछ घुटने मोड़े, कुछ उकड़ूं और कुछ पंजों के बल बैठे हैं। कुछ तो टाँगें पसारे भी बैठे हैं।

इनमें से कुछ धीरे-धीरे आगे बढ़नेवाली क़तार की तरफ़ देख रहे हैं। कुछ सड़क की तरफ़ ताक रहे हैं, तो कुछ अपनी हथेलियों को निहार रहे हैं। ज़्यादातर लोग ज़मीन की तरफ़ टकटकी लगाये वक़्त गुज़ार रहे हैं।

कुछ लोग यूं ही छोटे-छोटे कंकर उठा-उठाकर फेंक रहे हैं। कुछ ज़मीन पर मिट्टी में उँगलियों से लकीरें खींच रहे हैं। कुछ अपने हिलते हुए पंजों को एकटक घूर रहे हैं। बहरहाल, ज़्यादातर लोग ख़ुद में खो गये हैं।

आज कौन-सी तारीख़ है? और दिन? मैं यहां किस दिन आया? दो दिन पहले या दो महीने पहले? उसने पीछे मुड़कर देखा। बीते समय का फ़ासला नापने के लिए स्मृतियों के चिह्न तलाशे। दूर तक पानी का विस्तार था, क्षितिज तक उमड़ता हुआ पानी! और उसके परे आकाश का शून्य। दूरियां कहां से गिनें? किनारा बहुत दूर, दृष्टि की पकड़ से बहुत दूर।

जब वह सामान का बोझ सँभाले स्टेशन के बाहर आया था, रिक्शा वाले उसके पीछे पड़ गये थे। 'बाबूजी रिक्शा, बाबूजी ट्रेनिंग सेंटर, सिर्फ़ आठ आना।' साइकिल-रिक्शा में बैठना हमेशा से उसकी जान पर आता था। जब भी वह रिक्शा में बैठता था, उसकी नज़र रिक्शावाले के अपने-आप ऊपर-नीचे होते पैरों पर केंद्रित हो जाती थी। पिंडलियों की फूली हुई नसें उसे बेचैन करती रहती थीं।

बायें हाथ का बैग उसने ज़मीन पर रखा। बाज़ुओं को झटके देकर ढीला किया। उसने सोचा, दायें कंधे पर का होलडॉल ज़मीन पर रख दूं और कुछ हलका महसूस करूं। लेकिन अब तो मिलिटरी बैरक बहुत क़रीब दिखायी दे रहे थे।

जिस्म को आराम की छूट देकर सहलाना, उसकी हविस पूरी करना सब ठीक नहीं। भविष्य के कष्टों, यातनाओं और कठिनाइयों का अगर

सामना करना है तो जिस्म की आदतें बदलनी होंगी। बैग उठाकर वह आगे बढ़ा। सड़क पर कोई ख़ास आवाजाही नहीं थी। निःशब्द शांति फैली हुई थी। सड़क के दोनों किनारे चौड़े फ़ुटपाथ थे। फ़ुटपाथ से सटे हुए छोटे-छोटे बँगले थे। बँगलों के चारों ओर भव्य बगीचे। वह बैरक के पास आ पहुँचा। दायीं तरफ़ वाली बैरक तार से घिरी थी। लोहे के दरवाज़े के पास संतरी खड़ा था। बगल की दीवार से सटकर दो-तीन युवक खड़े थे, जो बहुत देर से उसकी तरफ़ एकटक देख रहे थे। वह पास आया तब भी उनकी नज़रें उसी पर गड़ी थीं। क़रीब आने पर उन्हें देखकर वह मुसकराया। लेकिन उनके चेहरे के भाव बिलकुल नहीं बदले। ठंडी-ठिठुरी दृष्टि से वे उसकी तरफ़ देखते रहे।

पूछताछ करने के लिए वह उनकी तरफ़ मुड़ना ही चाहता था कि एक ने बिना कुछ कहे सड़क के पार वाली बिल्डिंग की तरफ़ उँगली से इशारा किया। कंधे का बोझ सँभाले वह उधर मुड़ा। 'रिपोर्टिंग रूम' की तख़्ती देखकर वह अंदर चला गया। कमरे में पाँच-छः मेज़ें पड़ी थीं। बीच की खाली जगह में सामान सँभाले वह खड़ा रहा। आम दफ़्तरों की तरह यह भी किसी दफ़्तर का कमरा था। लेकिन यहाँ की विशिष्ट डिसिप्लिन उसे प्रभावित कर गयी। दीवार से लगी रैक्स। रैक्स और मेज़ों पर फ़ाइलें बड़े सलीक़े से जमायी गयी थीं। कमरे में तीन आदमी थे। सबकी पोशाक एक जैसी थी—खाकी हाफ़-पैन्ट, खाकी शर्ट, लाल पी०टी० शूज़। उनमें से एक फ़ाइल देख रहा था, और कुछ लिख रहा था। तीनों में वह सबसे कम-उम्र था। बाक़ी दो यूँ ही बैठे थे। किस से पूछताछ की जाये? इसी संशय में पड़ा वह खड़ा रहा।

"अबे ओ सलीम के बच्चे, सामान बाहर रख और ज़रा सलीक़े से खड़ा रह। नेहरू पार्क समझकर यहाँ टहलने आये हो?" मूंछ वाले प्रौढ़ क़िस्म के आदमी ने उसका यों स्वागत किया। वह फुर्ती से कमरे के बाहर हो लिया।

रिक्रूटिंग ऑफ़िस से प्राप्त हुए पेपर उसने मूंछ वाले आदमी के सामने रखे। मूंछ वाले ने दो-तीन जगह उस पर हस्ताक्षर किये और उन्हें बगल वाले टेबिल पर बढ़ा दिया। उस टेबिल वाले जवान आदमी ने उन्हें ढंग से

में रख दिया।

"रिक्रूटिंग ऑफ़िस से मिले कंबल यहीं जमा कर दो।" मूंछ वाला मर्दी, रूखी आवाज़ में बोला।

"लेकिन...मुझे कोई कंबल नहीं मिले !"

"नहीं मिले ? ब्लडी फ़ूल, क्या मतलब है तुम्हारा ? लेकर क्यों नहीं आये ?"

"लेकिन, मिस्टर, रिक्रूटिंग ऑफ़िस ने मुझे दिये ही नहीं तो मैं कैसे लाता ?...हाऊ एम आई टु नो व्हॅट द रिक्रूटिंग ऑफ़िस इज़ सपोज्ड टु डू ?"[1]

तीनों, नज़रें गड़ाकर उसकी तरफ़ देखते रहे। जवान आदमी की नज़रों में उसे कुछ संतोष का भाव दिखायी दिया।

"ठीक है, ठीक है। न दिये हों तो, वैसा बोलो। और यह मिस्टर, मास्टर छोड़ दो। 'सर' कहो, 'साहब' कहो। याद रखो, अब फ़ौज में हो, बच्चू, तमीज़ से बात करना सीनियर के साथ। 'सर' कहो, 'उस्तादजी' कहो।" कुछ क्षण मूंछों वाला रुका। फिर आवाज़ ऊँची करके कहने लगा, "ज़्यादा बकवास नहीं, समझे ! जो कुछ पूछा जाये उसका जवाब सिर्फ़ हां या ना में चाहिए। चलो, बाहर ठहरो।"

वह बरामदे में आया। शाम को सात-साढ़े सात तक और रँगरूट आ चुके थे। कुछ बिहार से, कुछ केरल से।

ये सब लोग इस दुनिया के लिए अजनबी थे। बरामदा छोड़कर वे जब बाहर निकले तब अँधेरा हो चुका था। मूंछवाले ने उन्हें तीन-तीन की क़तार में खड़ा किया। उसी पोजीशन में उन्हें छोड़कर वह अंदर चला गया। काफ़ी देर के बाद जब वह लौटकर आया, तो उसके साथ एक जवान सिग्नलमैन भी था। सिग्नलमैन ने सूचना दी, "मैं जब 'सावधान' कहूँगा सावधान रहना, 'दाहिने मुड़' कहूँगा तो दाहिने मुड़ना, 'थंम' कहूँगा रुक जाना, और 'तेज चल' कहूँगा तो तेज चलना। चलते वक़्त मुंह ब समझे ?"

1. मुझे क्या मालूम कि भरती दफ़्तर वालों को क्या करना चाहिए था ?

परेड जारी थी। लगातार मुँह से 'दायाँ...बायाँ, दायाँ...बायाँ' बोले जा रहा था, लेकिन उसके कदम उतने ठीक तरह नहीं पड़ रहे थे। उसे इसकी फ़िक्र भी नहीं थी। केवल आदतन बीच-बीच में वह 'दायाँ...बायाँ, दायाँ...बायाँ' कहता जा रहा था।

वे सब अजनबी थे। कुछ के पैरों में स्लीपरें थीं, कुछ ने जूते। कुछ दूर चलने के बाद उसे लगा, उसके पैर ठीक पड़ रहे हैं। पैरों की हरकत ने सुर साध लिया था। टप्...टप्...टप्—एक सम्पूर्ण आवाज़। हरकत में बहुत जल्द एक-सूत्रता आने लगी थी। वे सब लोग अलग-अलग हैं, लेकिन बहुत जल्द एक सूत्र में, एक अनुशासन में बँधते जा रहे हैं। समान हरकत, समान क्रिया, मर्यादित काम और संगठित शक्ति। इस सबकी ताकत में अपनी ताकत जोड़ने की, सबकी शक्ति में अपनी शक्ति का योगदान करने की वह कोशिश कर रहा था।

उसे एहसास हुआ कि उसकी पीठ से किसी ने उँगली छुआयी है, और कहीं से उसके नाम की पुकार हो रही है। वह टेबिल तक गया। मुट्ठियों को कसकर और गरदन तानकर वह खड़ा रहा। कप्तान ने भौंहें उठाकर उसे देखा।

सीना फुलाकर और पेट को सिकोड़कर उसने अपना शरीर और ज़्यादा चुस्त किया। कप्तान साहब ने 'ऐ हुक' बोली। उसकी तसवीर का पन्ना खोला। तसवीर के नीचे लिखे नाम को देखकर साहब ने कहा, "हूँ! अरे कुछ तो बोलो जवान, कुछ बको। अभी पूरा, तुम्हारा नंबर बोलो। रैंक बोलो। नाम बोलो। कहो—सर, सिक्स टू...थ्री सेवेन...टू फ़ाइव, रिक्रूट हिकी पेरेड के लिए हाज़िर है, सर'।"

"सर, सिक्स टू...थ्री सेवेन...टू फ़ाइव रिक्रूट हिकी पेरेड के लिए हाज़िर है, सर!"

गोरों की भयानक आवाज़ सुनकर उसकी पलकें एक झटके के साथ मुँदीं।

...पर लटके बल्ब से निकली किरणों की सलाखें उसकी आँखों में आ ...ीं। सफ़ेद दीवारों ने उसे घेर लिया। चौकोर हॉल, चौकोर दीवारें, ...ौकोर दरवाज़े, चौकोर खिड़कियाँ और चौकोर फ़र्श...एकरस, भावहीन ...फ़ेद रंग। अतीत की एक भी खरोंच न सह पाने वाली, पाषाण-मुद्रा लिये ...ड़ी यह इमारत! उसका शरीर पत्थर हो गया था। अचेतन, मृत, ठंडा कलेवर उस बैरक में पड़ा था।

मैं यहाँ क्या कर रहा हूँ? कहाँ आया हूँ मैं? इस अजनबी, अपरिचित दुनिया में कैसे आया मैं? प्रश्न, कई प्रश्न। इन प्रश्नों के क्या कोई जवाब हैं? क्या इनके जवाब मिलने ज़रूरी हैं? जवाब मिल भी जायें...तो भी क्या फ़र्क़ पड़ने वाला है? स्थिति में क्या कुछ परिवर्तन होने वाला है?

मैं हूँ। मैं हूँ, और मेरे सिर पर लटकने वाले बल्ब की नुकीली किरणें हैं। पाषाण चेहरे की यह इमारत है।

वह धीमे से उठकर बैठा। उँगलियों से पिंडलियों को छुआ। पिंडलियाँ ऊपर के हिस्से में फूल आयी थीं। उँगलियों से उन्हें सहलाने लगा। उँगलियों का दबाव कुछ बढ़ा और एक पैनी टीस समूचे शरीर में फैलती हुई दिमाग़ पर आ लगी। नसें और तमाम स्नायु ऐंठ चुके थे। दर्द बहुत था। टखनों पर फफोले पड़ गये थे। पैरों पर सूजन आ चुकी थी। उँगलियों के जोड़ों में जलन थी। कमर और पीठ के स्नायु टीस रहे थे।

मैं खुद अपने शरीर से डर रहा हूँ।

उम्र में पहली बार आज शरीर का एहसास मुझे हो रहा है। अब तक लगता रहा कि शरीर मन का गुलाम है। मन के नियंत्रण में काम करता है। लेकिन अब जान पाया हूँ कि शरीर का अपना अलग वजूद है। क्या मा... शरीर का ही अस्तित्व है? मन केवल भ्रम है? केवल छाया है? शरी... लपकता आगे बढ़ने वाला प्रवाह! मन, बहते हुए पानी की छलछल। ...

उसने कंबल हटाया। शरीर का जोड़-जोड़ कराह उठा। अगर इ... कराहना एम्प्लीफ़ाई किया जाये तो कितनी बड़ी गर्जना होगी! इस का... ने यह देखा। पास में सोये हुए मोटे शरीर वाले पांडे ने गर्दन उठाकर ... देखा। पांडे का शरीर इतना नर्म और थुल-थुल था कि उसे देखते ही ... लिजे स्पर्श का अनुभव होने लगता। डिकी को यही एहसास हुआ।

"गुड मॉर्निंग, डिकी।"

"मॉर्निंग, पांडे।" पांडे के नंगे बदन पर से डिकी ने अपनी नज़र हटायी। सेक्शन के अफ़सर साथी अब उठ चुके थे। कुछ बाथरूम चले गये थे। कुछ शेव की तैयारी में लगे थे। कुछ चाय की चुस्कियाँ लेते खड़े थे। कुछ कंबल लपेटे घुटनों में माथा डाले बैठे थे। पांडे कुछ कह रहा था। "आज पचास हुए !" परे बैठे शर्मा ने जोर से गर्दन हिलायी। बेसिक ट्रेनिंग शुरू हुए कल उनचास दिन पूरे हो चुके थे। आज का पचासवाँ दिन। एक सौ बीस दिन की इस ट्रेनिंग के खत्म होने में अभी सत्तर दिन बाकी हैं। सत्तर दिन...ड्रिल...पी०टी०...फ़टीग ! ड्रिल...पी०टी०...फ़टीग !

उसने दीवार के पास से शीशा उठाया और बक्से पर रखा। वह अपना चेहरा देख रहा था। आईने से एक अजनबी चेहरा उसकी तरफ़ देख रहा था। चौड़ा माथा, पिचके हुए गाल, गालों में छिपी हुई आँखें। ठिठुरी, थकी हुई नज़रें। आँखों के नीचे सियाह झुर्रियाँ। पतला लटका हुआ जबड़ा। सो, दिस इज़ मी, रियल मी ![1] उस अजनबी चेहरे की तरफ़ वह देखता रहा। चेहरे में उसने पहले वाले डिकी को तलाशने की कोशिश की। लेकिन वह ख़ुद नहीं समझ पा रहा था कि वह क्या तलाश कर रहा है ? डिकी के चेहरे को डिकी ख़ुद भूल चुका था। जिस्म की, चेहरे की ख़ासियत उसने तराश डाली थी।

उन सैकड़ों में वह भी एक। ख़ाकी हाफ़-पैन्ट, ख़ाकी बनियान, साथ पी० टी० शूज़ ! सेक्शन ए-10, 623725 रिक्रूट डिकी। सिर्फ़ एक संख्या !

दायाँ...बायाँ, दायाँ...बायाँ। लेफ़्ट-राइट...लेफ़्ट-राइट, सेक्शन थम। चालीस जवानों के पैर एक साथ रुके। दायें हाथ घुटनों की तरफ़ खिंच गये। नज़रें शून्य में।

1. तो यह हूँ मैं। यह है मेरा असली चेहरा।

ही उनकी मेडिकल जांच हो चुकी थी। मेडिकल रूम में कल दोपहर
रीब सात-आठ सौ रँगरूट जमा हुए थे। सौ के क़रीब लड़के क़तार में
ड़े थे। उन्होंने हाफ़-पैंट और बनियान उतार दिये थे। सिर्फ़ जांघिये पहने,
गे बदन। क़तार धीरे-धीरे आगे खिसक रही थी। कमरे में, अंदर की तरफ़
गलमुच्छों वाला मेडिकल कोर का हवलदार हाथ में पेन्सिल लिये बैठा
था। ए-10 सेक्शन वाले रँगरूटों की फ़ेहरिस्त हवलदार के सामने थी
क़तार के लड़के हवलदार से पांच-छः नंबर पीछे ही जांघिये के नाड़े
खोलकर तैयार रहते थे, क्योंकि हवलदार का वक़्त क़ीमती था। पुकार
होते ही रंगरूट को जांघिया घुटने तक खिसकाकर हवलदार के सामने खड़े
हो जाना पड़ता था। पीछे मुड़, नीचे झुको, खांसो...नेक्स्ट, अगला नंबर!

मेरे जिस्म की ख़ासियत, मेरे व्यक्तित्व का आवरण किसी ने खुरच
डाला है। उस 'अदृश्य' के क्रूर और तेज नाख़ून मेरी खाल को अलग कर
चुके हैं। अब उँगलियां जिस्म पर तैर रही हैं। सहज, धीमी, लेकिन
लगातार। मैं जानता हूँ, किसी भी क्षण ये उँगलियां मेरे जिस्म में भोंकी
जा सकती हैं। भीतर...दूर तक, मस्तिष्क तक, हृदय तक ये उँगलियां
पहुँचेंगी, गहरी...और गहरी। परत-दर-परत चीरती हुई, एक के बाद
एक, खाल की परतों को छीलती हुई, खाल को छीलकर भीतर छूं
हुई...।

मेरी चाल, बात करने का अपना ढंग, खड़े होने का अपना तरी
फबते कपड़े, मेरी आदतें, मेरे विचार, मेरे मत, मेरी यादें और...
सपने।

मेरे समूचे अस्तित्व के चिथड़े-चिथड़े कर दिये जायेंगे। और
बची हड्डियों के ढांचे पर टांग दिये जायेंगे और मैं पड़ा रहूँगा लक़व
हुए मरीज़ की तरह—लिजलिजा, बेबस, आतंकित। मेरे अस्ति
एक-एक कण चीख़ता रहेगा। कांपता रहूंगा। लेकिन मैं बिलकुल
नहीं। पानी में गिरे हुए मिट्टी के ढेले की तरह गलता चला
बिखरता जाऊँगा।

डिकी? डिकी कहाँ होगा तब? खाल, चरबी, स्नायु की
दी जायेंगी तब क्या बचेगा? दिल और दिमाग़ के चिथड़े

देने के बाद शेष क्या रहेगा ? हड्डियों का ढाँचा, या अनश्वर आत्मा ?

हर पल, हर लमहे...दिन-रात...यह प्रक्रिया चल रही है। मुझे निगलने वाली इस प्रक्रिया का वर्णन करना कठिन है। इसकी व्याख्या करना भी आसान नहीं है। इंसान की इंसानियत को मार डालने वाली प्रक्रिया है यह। मानुष को अमानुष बना देने वाली...हैवान बना देने वाली ...यंत्र बना देने वाली प्रक्रिया !

पांडुरंग अंदर आया। रोज की तरह आज भी उसने डिकी के सिरहाने रखा हुआ गिलास उठाया। मग से आधी चाय गिलास में उँडेली और अपनी जगह वापस चला गया। डिकी को ख़याल आया, आज पांडुरंग भूपाली के स्वर नहीं गुनगुना रहा था।

"क्यों पांडुरंग, क्या हुआ ?"

कुछ देर पांडुरंग कप से चाय के घूँट लेता रहा। फिर यकायक ऊँची आवाज में कहने लगा, "बोर्ड पर आज चालीसवाँ दिन लिखा है।"

बैरक में शांति फैली थी। चालीस ? ए-10 मैक्शन इज रेलीगेटेड। टेन डेज ! दस दिन !.. दस दिन...दस दिन बढ़ा दिये गये थे। शेव करते-करते पांडे रुका। शर्ट के बटन लगाते हुए शर्मा अवाक् खड़ा रहा। विश्वनाथ का पैर दरवाजे के पास लड़खड़ाया। डिकी की रीढ़ की हड्डी ढीली पड़ने लगी। कंधे लटक गये। होंठ सूख गये। "ब्लडी रास्कल्स !" बलबीर सिंह की ज़ोरदार गाली उसके कानों से आकर टकरायी और उसने महसूस किया, सभी की तरह वह भी सुन्न हो चुका था।

आई मस्ट नॉट यील्ड।[1] मुझे हर क्षण सतर्क और सावधान रहना चाहिए। सतत जागृत। कुछ हद तक बाजी मैं हार चुका हूँ। लेकिन अब जितना बचा है उसे सुरक्षित रखना होगा। वॉच आउट...अनथक, बिना किसी ग़फ़लत के।

---

1. मुझे हार नहीं माननी चाहिए।

डिकी उजलत में उठा। बाहर निकलते-निकलते उसने कहा, "सो बॉयज़, अस्सी दिन और। चियर्स !"

वह कमरे से बाहर आया। इसमें अप्रत्याशित जैसा कुछ नहीं था। ट्रेनिंग की अवधि भले ही एक-सौ बीस दिन की हो, पर सहूलियत के लिए सेक्शन 'रेलीगेट' किये जाते हैं। चलता है।

दो बैरकों के बीच की दरार से पूरब की तरफ़ आसमान में चमकता शुक्रतारा उसे दिखायी दिया। वह ठिठका। साढ़े चार बजे हैं, शायद। तौलिया सँभाले वह आगे बढ़ा, तब उसको ख़याल हुआ कि आज उसने हमेशा की तरह तारे को देखकर दाद नहीं दी थी।

"हाउ ब्यूटीफुल !" ज़ोर से उसने कहा।

दो

एड्ज्यूटेंट टेस्ट अब करीब आ चुका है। ट्रेनिंग शुरू हुए आज नब्बे दिन पूरे हुए।...कैनवस पर कितनी लंबी अवधि !

लेकिन इस लंबी अवधि की स्मृतियां क्या मेरे दिमाग़ में अब भी जीवित हैं ? समय के लंबे-चौड़े कैनवस पर सिर्फ काला, कठोर रंग पुता हुआ है। बीभत्स, कड़े, काले रंग की लंबी पट्टी। ड्रिल...पी० टी०...फ़टीग। ड्रिल...पी० टी०...फटीग !

इस लंबी अवधि के हर क्षण ने मेरा अस्तित्व निचोड़ डाला है। प्रत्येक क्षण जैसे अनंत काल का रूप धारण करके मेरे समूचे अस्तित्व को ढँक चुका है। प्रत्येक क्षण संसार का बोझ उठाये मेरी छाती पर आ गिरा है। इस क्षण के नीचे मैं घुटा जा रहा हूँ।

लेकिन अब मैं उन दिनों को, अनगिनत घंटों को और अनंत क्षणों को सामान्य शब्दों में बयान कर सकता हूँ। उन यातनाओं को कम-से-कम शब्दों में व्यक्त कर सकता हूँ।

एड्ज्यूटेंट काले की नज़रें गिद्ध की-सी थीं। परेड-ग्राउन्ड के किनारे ज्यों ही वह आकर खड़ा होता, मारे ड्रिल-इन्स्पेक्टर घबरा जाते। एड्ज्यूटेंट काले की जीप आती देखकर हवलदार जर्मनसिंह ने अपने सेक्शन को खड़ा किया और राइफल से सलामी देने की पोज़ीशनें समझाने लगा। पूरा सेक्शन स्तब्ध खड़ा जर्मनसिंह की तरफ देख रहा था। सभी ने एड्ज्यूटेंट की जीप को देखा था। एड्ज्यूटेंट काले की आवाज़ उनके कानों तक पहुँची।

"हवलदार जर्मन, रिअर लाइन नंबर फ़ाइव क्यों हिल रहा है? वेक-अप !" हालांकि परेड-ग्राउन्ड काफ़ी दूर थी, फिर भी कैप्टन काले की नज़रों ने पांडे को पकड़ लिया था। डिकी ने पांडे की तरफ़ कनखियों से देखा। पांडे थरथर कांप रहा था।

एड्ज्यूटेंट काले के चले जाने के बाद हवलदार जर्मनसिंह ने आराम की पोज़ीशन में सेक्शन को खड़ा किया। तने हुए स्नायु ढीले करके सब रिलेक्स हो चुके थे। पिछले आठ दिनों से जर्मनसिंह ने सेक्शन से काफ़ी मेहनत करवायी थी। परेड-टाईम के अलावा दोपहर में लगातार तीन-तीन, चार-चार घंटे ड्रिल करवायी थी। दायां...बायां, दायां...बायां, थंम ! पीठ का पसीना बहकर जूतों के तले में जमा हो जाता था। चीख़-चीख़कर जर्मनसिंह का हलक़ सूख जाता था। सुबह-शाम वह नमक के पानी से ग़रारे करता हुआ दिखायी पड़ता था। हवलदार जर्मनसिंह ने अपने चेहरे का पसीना पोंछा। उसका गोरा चेहरा लाल हो चुका था। कुछ मिनटों के लिए उसने अपनी गरदन नीची की, कंधे ढीले किये, और जूतों पर नज़रें गड़ाये खड़ा रहा। और फिर अचानक उसका जिस्म तन गया। गरदन तानकर वह चीख़ा। "सेक्शन !" सबकी रीढ़ की हड्डियां तन गयीं। घुटने अंदर की तरफ़ खिंच गये। पेट अंदर धँस गये। सबकी नज़रें शून्य में खो गयीं। कुछ क्षण रुककर जर्मनसिंह भौंका, "पांडे, फ़ॉल-आउट !" धीमी चाल से पांडे क़तार के बाहर आया। सेक्शन की आँखें उस पर जमी थीं। अगर संभव हो सकता तो पांडे परेड-ग्राउन्ड छोड़कर कभी का भाग चुका होता। जर्मनसिंह की नज़रें पांडे की तरफ़ उठीं। उसने पूछा, "पांडेजी, आप कहां तक पढ़े हैं ?"

"जी ? जी, मैंने बी० ए० पास किया है।" पांडे ने जवाब दिया। अब तक पांडे काफ़ी सँभल चुका था।

ऐसा लगता था, मानो जर्मनसिंह ने उसे प्यार तथा भाईचारे की बातें करने के लिए फ़ॉल-आउट किया हो।

"बी० ए० ? अरे, आप तो बहुत पढ़े हुए हैं, पांडेजी !"

ख़ुशी के मारे पांडे की छाती फूल उठी। नज़रों में चमक थी।

"अपने पूरे रेजिमेंट में कोई ग्रेज्युएट नहीं होगा। सेक्शन में है कोई और ग्रेज्युएट ?"

पांडे इस तरह की जिंदगी के लिए कतई फ़िट नहीं था। लाड़-प्यार में पले उसके शरीर, और उसकी आदतों आदि के लिए यह बर्दाश्त के बाहर था। इस मामले में वह बहुत कमजोर था। ड्रिल हो या पी० टी०, पांडे लगातार गलतियाँ करता था और लगातार गालियाँ सुनता था, लगातार अपमानित होता था। लेकिन वह ग्रेज्युएट था और इस थोथे आधार पर अफसर बन जाना चाहता था। इस झूठे विश्वास के बल पर, पग-पग पर असफलताओं को झेलते हुए वह जी रहा था। धोखा देने वाले इस विश्वास की आड़ में वह एक-एक क्षण, आने वाले हर क्षण को धक्का दे रहा था।

"कौन-सी डिवीजन में पास किया है बी० ए० आपने, पांडेजी?" जर्मनसिंह ने पूछा।

"सेकन्ड, जी।"

"सेकन्ड! बहुत खूब! पांडेजी, सर्टिफ़िकेट तो होगा आपके पास?"

"हाँ जी, है तो, है मेरे पास।" बड़े उत्साह से पांडे ने जवाब दिया।

"तो ऐसा करो, पांडेजी," जर्मनसिंह नाटकीय ढंग से रुका, पॉज लिया। "सर्टिफ़िकेट को अच्छी तरह रोल कर लो, अपना पाईप रहता है ना? बैसे...और...और डाल लो अपनी उसमें साले, मादरचोद, ब्लडी फूल...आ गये आर्मी में! आर्मी को बदनाम करने। दायाँ-बायाँ नहीं समझ में आता गधों को, और कहते हैं हमने बी० ए० पास किया है जी...! क्या आर्मी ने न्योता भेजा था आपको?"

पांडे एकदम पस्त हो गया। उसका चेहरा लटक गया। लग रहा था कि वह जोर से सिसकते हुए गला फाड़कर रो पड़ेगा।

बीच रात डिकी अचानक जाग पड़ा। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि वह कहाँ है! धुंधलके में उसे दिखायी पड़ा, पांडे जैसी कोई आकृति दरवाजे से बाहर बड़ी तेजी से चली जा रही है। वह हड़बड़ाकर उठ बैठा। शर्ट के बटन लगाते हुए बाहर आया। सेक्शन तीन लाईन में खड़ा था। डिकी बड़ी फुर्ती से अपनी जगह आकर खड़ा हुआ। कड़ाके की सर्दी थी। रात के दो बज चुके थे। "क्या हुआ?" उसने शर्मा से पूछा। "मालूम नहीं।" शर्मा ने जवाब दिया। शायद रात के दो बजे उठकर अच्छा भला

ी अच्छा नहीं लगा था। वह कुछ नाराज था। जर्मनसिंह अपने कमरे से ाहर आया। उसने घुटनों तक लम्बा ओवरकोट पहन रखा था।

“गधे, बेवक़ूफ़ ब्लडीफ़ूल, रास्कल, मादर—!” जर्मनसिंह की ज़बान पर सरस्वती नाच रही थी। जर्मनसिंह कश्मीरी डोगरा था। लेकिन उसे भारत की चौदह भाषाओं और अंग्रेज़ी की गालियाँ ज़बानी याद थीं। सेक्शन के पास पहुँचते ही उसने 'दाहिने मुड़' का ऑर्डर दिया और 'लाइंग पोज़ीशन' कहकर भौंका। डिकी ऊब गया। अंदर बिस्तर में 'लाइंग पोज़ीशन' क्या कुछ ग़लत थी? ज़मीन साली कितनी ठंडी है! कंकर चुभ रहे हैं। इस भड़वे को क्या कुछ सपना आया था जो रात के दो बजे लगा सीटियाँ बजाने!

“क्रॉलिंग शुरू। बैरक के चारों ओर चक्कर काटो। पहले चार आदमी माँगता हूँ। शूट!”

हाँ, यह कुछ ठीक लगा। शरीर में कुछ हरारत तो पैदा हो जायेगी। लेकिन आख़िर मामला क्या है? पर सोचने के लिए वक़्त कहाँ था? कुहनियों के बल जल्दी-जल्दी आगे बढ़ना शुरू हुआ। क्या बदमाशी है! आधी राती को बिस्तर की गर्मी छोड़कर इतनी कड़ाके की सर्दी में बाहर निकल आने और सेक्शन को परेशान करने से क्या लाभ? ख़ुद भी परेशान और दूसरे भी परेशान। शायद जर्मनसिंह भी अपनी बीवी की याद मे बेचैन होगा। कुहनियों और घुटनों की हरकत तेज़ करके डिकी आगे बढ़त गया। बैरक का एक चक्कर काटकर सब लोग अब जर्मनसिंह के साम आ गये। “खड़े रहो, दौड़कर चलो, पहले चार आदमी चाहता हूँ।” स लड़के दौड़ने लगे। इसके बाद काफ़ी देर तक दौड़ना, रेंगना और एक जगह पर कूदना। अलग-अलग प्रकार की वर्ज़िश चलती रही। इसके ब सबको क़तार में खड़ा करके जर्मनसिंह ने फिर से अपना गाली-पाठ दो गया। याद करके बची-खुची तमाम गालियाँ दे डालीं। अब इसके क्या किया जाये? उसकी समझ में नहीं आ रहा था। इसलिए कुछ दे लिए वह ख़ामोश खड़ा रहा। फिर यकायक चीख़ा, “लाइंग पोज़ीशन जर्मनसिंह की नज़रों से ओझल हो जाने के बाद बैरक के पिछले हि पहुँच जाने पर डिकी ने अपनी टाँगें पसार लीं, और बाज़ुओं प

टिकाकर आँखें बंद कर लीं। शर्मा सबके पीछे से दौड़ता हुआ डिकी के क़रीब आया। उसने डिकी को चेतावनी दी, "डिकी, चलो यार, वरना तुम्हारे लिए सबको रगड़ना पड़ेगा।" डिकी ने फिर से अपनी पोज़ीशन ली और कहा, "ठीक है यार, उस्ताद भी साला अजीब आदमी है। फ्रॉग-जंम्प, रॉलिंग...मेंढ़क बनो, साँप बनो। अरे, अच्छे-ख़ासे इन्सान हैं हम। हमें भागने को नहीं, हमें दौड़ने को कहो! आर्मी में आने से पहले जर्मनसिंह शायद जादूगर बनना चाहता होगा। लेकिन आखिर मामला क्या है? यह सब-कुछ रात के दो बजे क्यों?"

"रात में किसी ने बैरक में टट्टी कर दी।" शर्मा ने हाँफते हुए कहा।

डिकी और शर्मा बैरक का चक्कर लगाकर सेक्शन में जा मिले। जर्मनसिंह की लेक्चरबाज़ी जारी थी।

"तुम लोग आर्मी की इज्ज़त बिगाड़ रहे हो। न जाने कहाँ से कचरा भर दिया है? सिविल लाइफ में कुछ नहीं कर पाये तो यहाँ आ गये। उधर ही रहते तो क्या कुछ बिगड़ जाता?"

इस पर किसी की दो रायें नहीं हो सकती थीं। काफ़ी देर तक एक ही रेकॉर्ड बजा चुकने पर जर्मनसिंह रुका। इस अवसर का और अँधेरे का फ़ायदा उठाकर किसी ने धीमी आवाज़ में फुसफुसाकर कहा, "उस्तादजी, शायद कुत्ता होगा। रात में मैंने एक कुत्ते को बैरक के बाहर जाते देखा था।" उसके बाद काफ़ी देर तक चर्चा चलती रही। जर्मनसिंह अपने साथ एमपटों की एक टोली को लेकर अंदर चला गया। बैरक की बत्तियाँ जलायी गयीं। काफ़ी देर तक छानबीन चलती रही। गवाहियाँ और जिरहें हुईं और फ़ैसला दिया गया। उस्ताद बाहर आया "अब साढ़े तीन बज रहे हैं। अब सोना नहीं।" बड़ी प्यारी और क़ीमती सलाह देकर जर्मनसिंह शरारतें करने के लिए निकल गया।

ठंड गजब की थी। फिर भी प्यास के मारे डिकी का गला सूख रहा था। नल पर जाकर उसने पानी पिया। लौटा, तो देखा कि पांडे घुटनों के बीच सिर दिये बरामदे में बैठा है। डिकी उसकी बगल में बैठ गया।

"पांडे, हिम्मत न हारो यार, जायेंगे, ये दिन भी जायेंगे।"

डिकी उसे दिलासा देना चाहता था। पांडे डिकी के कंधे पर

रखकर सिसकने लगा। डिकी चुपचाप उसकी पीठ सहला रहा था। नल की तरफ़ जाते हुए बलबीरसिंह कुछ क्षण रुका। उसने पांडे की तरफ़ देखा और व्यंग्यात्मक स्वर में कहने लगा, "अरे क्या पांडेजी, इतने में ही हार गये? अभी तो कोसों चलना है। पंछी अब जाल में फँस गया है। रोने से क्या फ़ायदा? आये देश-सेवा करने! दे हैव कॉट अस, माई चम[1]! मान लिया, भाई, मान लिया, देश-सेवा! देश के वीर! सपूत! मातृभूमि! बहुत खूब! बहुत खूब! अब कोई रास्ता नहीं, यार। मैं बताऊँ, पांडे, बस सोचना बंद करो। सिर्फ़ खाओ, पियो, जियो। यू आर नॉट टू क्वेश्चन ह्वाई, यू आर बट टु डू ऐंड डाई[2]।"

"यू ईडियट, शट अप!"[3]

बलबीरसिंह नल की ओर चला गया। पांडे डिकी के कंधे पर माथा घिस रहा था। सिसकियाँ भरकर रो रहा था। डिकी का कंधा दर्द कर रहा था। पांडे के आँसुओं से उसकी कमीज गीली हो चुकी थी। कंधे के पास उसे कुछ ठंडा-ठंडा लग रहा था। "पांडे, तुम ग्रेज्युएट तो थे ही। कमीशन लेकर ही आना था आर्मी में।" पांडे का शरीर काँप उठा। "कुछ बात नहीं, यार, अपना ट्रेड तो ऑपरेटर है। टेक्निकल ट्रेनिंग सेंटर में अपना कमाल दिखाना।" नीचे का फ़र्श सर्द था। टाँगों को उसका स्पर्श सहन नहीं हो रहा था। 'ओ, डैम यू, डैम यू!' डिकी मन-ही-मन बुड़बुड़ाया।

तमाम दिन पांडे का मन ठिकाने नहीं रहा। सारे दिन वह लगातार ग़लतियाँ करता रहा और लगातार गालियाँ खाता रहा। दूसरे दिन परेड के लिए सेक्शन 'फ़ॉल-इन' हुआ तो उसमें पांडे नहीं था। सबको लगा, शायद पांडे 'सिक रिपोर्ट' पर गया होगा। सुबह किसी ने उसे देखा नहीं था। नाश्ते पर से जब सेक्शन बैरक में लौट आया तो हवलदार जर्मनसिंह ने डिकी को एक तरफ़ बुलाया। "डिकी, तुम जरा इधर ही ठहरना। परेड पर मत जाना।"

तमाम रँगरूट जब परेड-ग्राउंड पर जा चुके तो डिकी और हवलदार

1. मेरे यार, उन्होंने हमें फाँस लिया है।
2. तुम्हें कोई सवाल नहीं करने हैं, सिर्फ़ आज्ञा-पालन करना है और मरना है।
3. बकवास बन्द करो, बुद्धू!

जर्मनसिंह रेजिमेंट ऑफिस की तरफ़ चले गये। कैप्टन काले बाहर ही खड़ा था।

"जवान, पांडे को पहचानते हो?"

"पांडे मेरे ही सेक्शन में है, सर।"

"हाँ, वह तो ठीक है, पर तुमसे उसकी ख़ास दोस्ती थी ना?"

"ख़ास दोस्ती? वैसा तो कुछ नहीं था, सर।"

"नहीं कैसे? मैंने तुम्हें कई बार आपस में बातें करते देखा है।" जर्मनसिंह बीच में ही पूछ बैठा। डिकी कुछ कहना चाहता था कि उसके पहले ही कैप्टन काले ने कहा, "हवलदार जर्मनसिंह, तुम अंदर चलो, हम आ ही रहे हैं।"

हवलदार जर्मनसिंह दफ़्तर में गया, उसके दूर निकल जाने के बाद कप्तान साहब ने डिकी के कंधे पर हाथ रखा।

"डिकी, तुम बंबई के हो न?"

डिकी ने गर्दन हिलाकर 'हाँ' कहा।

"तुम्हारी और पांडे की गहरी दोस्ती थी, यह मैं जानता हूँ। डिकी, तुम इससे इंकार नहीं कर सकते, और इसमें कोई बुराई भी नहीं, इसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं।" कप्तान साहब कुछ देर रुके।

"कल रात से पांडे गायब है, तुमसे कुछ बात हुई थी उसकी?"

"कल सुबह के बाद से उससे मेरी कोई बात नहीं हुई, सर।"

"वह तो ठीक है, पर तुम्हें कुछ अंदाज़ा तो होगा कि कहाँ है पांडे?"

"सर, मुझे कोई अंदाज़ा नहीं। सच, मैं कुछ नहीं जानता, सर।"

"क्या जर्मनसिंह पांडे को बिना वजह परेशान करता था?"

"पांडे के साथ उस्ताद की कोई ख़ास दुश्मनी नहीं थी, सर।" डिकी को पहली बार महसूस हुआ कि पांडे के बारे में वह कुछ नहीं जानता। पिछले चार महीनों से वे साथ खाते, साथ सोते; ड्रिल, राइफल ट्रेनिंग, फ़टीग आदि हर तरह की रगड़ाई को दोनों ने साथ-साथ सहा था। फिर भी पांडे के बारे में वह कुछ नहीं जानता था। पांडे उसके क़रीब आया था, फिर भी बहुत दूर रहा था। कहाँ चला गया होगा पांडे?

काफ़ी देर तक उल्टे-सीधे सवाल पूछने के बाद क

कुछ तसल्ली हुई। वह अपना चेहरा डिकी के चेहरे के पास लाये। उनकी गिद्ध जैसी नज़रें डिकी के चेहरे को घूर रही थीं।

"डिकी,...आज सुबह रेलवे ब्रिज के नीचे पांडे की लाश मिली है। तुम्हें आइडेंटीफ़िकेशन के लिए जाना पड़ेगा।"

कप्तान साहब को सामने देखकर डिकी ने जेब से रूमाल निकाला और माथे पर से पसीना पोंछा।

पांडे इस परिवेश के भीतर आ चुका था, लेकिन यहां टिके रहने की क्षमता उसमें नहीं थी। वह यहां रह नहीं सकता था। लेकिन यहां से लौट जाना भी संभव नहीं था। अब तो वह बाहर भी नहीं रह सकता था। भीतर आकर उसने ग़लती की थी, शायद ज़िंदगी की पहली और आख़िरी ग़लती! ऐसी ग़लती, जिसमें सुधार की क़तई कोई गुंजाइश नहीं थी। इट वॉज़ लाइक ऐन ओरिजिनल सिन[1]; पांडे ने अपनी मुक्ति करवा ली थी। इस कटघरे से मुक्ति का सबसे आसान और क़रीब का रास्ता उसने अपनाया था। पांडे को अपनी शक्ति का सही-सही पता था।

टेक्निकल ट्रेनिंग सेंटर में दाख़िल हुए डिकी को दो दिन हो चुके थे। बे
ट्रेनिंग ख़त्म करके वह यहां आया था। शाम को रोल-कॉल के
रेजिमेंटल ऑर्डर पढ़कर सुनाने के बाद कंपनी हवलदार-मेजर (सी०
एम०) ने कहा था, "जिसे तैरना आता है वह कल सुबह आठ बजे स्
टैंक पर कैप्टन जुनेजा को रिपोर्ट करे।" टेक्निकल ट्रेनिंग सेंटर का
कुछ अलग था। यहां ड्रिल, पी० टी० आदि का ख़ास महत्व नहीं
ज़्यादा ज़ोर टेक्निकल-ट्रेनिंग पर था। फ़ौज में स्पोर्टसमैन ऐश कर
है, इसका आभास डिकी को था। सुबह वह स्वीमिंग टैंक पर आया
सत्तर जवान पहले ही से वहां मौजूद थे। कैप्टन जुनेजा का क़द ल
बदन छरहरा था; चेहरे के अनुपात में कुछ कम लंबी नाक,

1. यह तो एक मूल पाप की तरह थी।

बारीक मूंछें, आवाज में हलकी शरारत, कुल मिलाकर आकर्षक व्यक्तित्व था उनका। घंटे-भर तक शोर-शराबा चलता रहा और फिर दस लड़कों को चुना गया। अपने सेक्शन से अकेला डिकी उन दस में था। कैप्टन जुनेजा उन्हें एक तरफ़ ले गये और हरेक का परिचय प्राप्त किया।

"पिछले सात बरसों से स्वीमिंग चैंपियनशिप की शील्ड दूसरी रेजिमेंट को जाती रही है। सी० ओ० साहब चाहते हैं कि इस बार शील्ड हमारी रेजिमेंट को मिलनी चाहिए। मैं पर्सनली इसका ख़याल रखूंगा। शुरू के दो पीरियड तुम्हें माफ़ कर दिये जायेंगे। लेकिन रोज़ चार-पांच घंटे प्रैक्टिस होनी चाहिए और यहां मैं तुम्हारा इन्स्ट्रक्टर हूं। नो नॉनसेंस ऑफ़ सैल्यूटिंग[1]।"

डिकी कप्तान जुनेजा से ख़ुश था। वह ख़ुद इस मत का था कि जिसके कंधे पर पीतल के बटन लगे हों सिर्फ़ इसलिए उसे सैल्यूट किया जाये, सरासर बेवकूफ़ी है। और ट्रेनिंग सेंटरों में तो दिन-भर में लगभग साठ-सत्तर बार सलामी देनी पड़ती है। संयोगवश जब कोई अफ़सर सामने पड़ जाता, सैल्यूट करना पड़ता। इससे बचने के लिए डिकी दूसरे रास्ते बिल्डिंगों के पिछवाड़े से या पेड़ों की आड़ से निकल जाता।

टेक्निकल ट्रेनिंग सेंटर में आ जाने से उसके दोस्त बदल चुके थे। बैरक में उसकी खाट के अगल-बग़ल अनिल साहा और सुधांशुभूषण चन्द्र की खाटें थीं। सुधांशु का रंग काला था, चेहरा सादा और कुछ बाहर को उभरी हुई आँखें। वह अपनी आँखें लगातार मिचमिचाता रहता था, मानो उसकी आँखों का उससे अलग कोई अस्तित्व हो। अनिल साहा सुधांशु का बिलकुल उलट था। बहुत ही नाज़ुक, नाटा क़द, गोल चेहरा और गदबदा शरीर, कंधे कुछ उतरे हुए, आँखें बड़ी-बड़ी, चेहरे पर मुँहासे, होंठों पर हलकी पतली-पतली मूंछें, घुंघराले बाल। और फिर उसकी मधुर प्रवाहमयी असमिया भाषा, जिसमें कर्णकटु व्यंजनों का इस्तेमाल यूं भी नहीं होता। कुछ भारी लेकिन दबी हुई आवाज़ में बात करने का उसका ढंग उसे और कोमल बना देता था। वैसे अनिल शुद्ध हिंदी भी बोलता व

1. सैल्यूट आदि करने की कोई ज़रूरत नहीं।

लेकिन लहज़ा असमिया था। इसीलिए सेक्शन कमांडर हवलदार पिल्लै को वह बहुत पहले ही प्रभावित कर चुका था।

हवलदार पिल्लै पेंशन की उम्र को पहुँच चुका था। उसका ट्रेड रेडियो मेकैनिक का था, पर वह कुशल ऑपरेटर भी था। जब वह 'मोर्स-की' ऑपरेट करता तब हेड-फ़ोन से मोर्स के सुर इतने स्पष्ट और लयबद्ध होते थे कि उन्हें लिपिबद्ध करने के बजाय हाथ रोककर उन्हें सुनने को मन करता था। पिल्लै आकारबद्ध चेहरे का सुंदर कृष्णवर्णी व्यक्ति था। शरीर स्थूल होने पर भी वह स्मार्ट दिखायी देता था। नज़रों में रोब था, लेकिन उनमें क्रूरता नहीं थी। आवाज़ कठोर।

किसी मोर्चे पर अपना सेक्शन पीछे न रहे, इसके लिए वह स्वयं प्रयत्नशील रहता। रात को आठ से दस के बीच वह एक्स्ट्रा पीरियड्स लेता। मोर्स रीडिंग, मोर्स सेंडिंग में कमज़ोर लड़कों को लेकर वह बरामदे में बैठ जाता। नये रंगरूटों के साथ व्यवहार करते समय उस्ताद लोगों को दो बार सोचना पड़ता, क्योंकि ये लोग आर्मी के क़ायदे-क़ानूनों का नंबर बताकर अपने से ऊपर वालों को चुप करने की कोशिश में रहते। लेकिन अफ़सरों से न घबराने वाले लड़के हवलदार पिल्लै से घबराते थे। पिल्लै छोटी-मोटी बातों और बेवजह की डिसिप्लिन से लड़कों को परेशान नहीं करता था। आउट-पास के बग़ैर कभी कोई यूनिट घूमता हुआ दिखायी पड़े तो बातें सुनाकर वह उन्हें छोड़ देता। लेकिन रात की क्लास में बेंत हाथ में लेकर ही बैठता था। क्लास शुरू होने के पहले दिन उसने सबको चेतावनी दे दी थी—

"मैं क्लास में, जहाँ मौक़ा मिला पिटाई करता हूँ, और ऐसे मौक़े ढूँढ़ता रहता हूँ; पिटाई भी ऐसी कि नानी याद आ जाये। एक बेंत टूट जाये तो दूसरा ले आता हूँ, अपने पैसों से।"

हवलदार पिल्लै को भुलाना कठिन था, लेकिन उसके ख़िलाफ़ शिकायत करके भी कोई फ़ायदा नहीं था। पिल्लै और कंपनी-कमांडर एक साथ आर्मी में दाख़िल हुए थे। मेजर सुब्बाराव को कमीशन मिल गया था, हवलदार पिल्लै सिर्फ़ हवलदार रह गया था। डिको सुबह-शाम स्वीमिंग की प्रैक्टिस करता। शाम तक वह इतना थक जाता कि बिना कुछ खाये,

सिर्फ दूध पीकर सो जाना। दूसरे लड़के पढ़ते रहते, रटते रहते। पिल्लै का शोर जारी रहता। लेकिन इस शोर-शराबे के बीच डिकी ऊँघता रहता। चैकिंग के लिए पिल्लै जब बैरक में आता तो डिकी को सोता देखकर झुंझलाता। बेंत खाट पर पटककर कहता, "यह कौन सो रहा है ब्लडी फूल ? अबे ओ, रेजिमेंट स्पैअर, आर्मी का दामाद, सोओ, सोओ, बरखुरदार !" धीरे से पलकें खोलकर डिकी उसकी तरफ देखता और अलसायी हुई मुसकराहट फेंककर फिर आँखें बंद कर लेता।

शनिवार की शाम को डिकी कुछ जल्दी लौट आया था। हर शनिवार को अफ़सरों की बीवियों-बच्चियों के लिए तीसरे पहर के पाँच बजे तक स्वीमिंग टैंक खुला रहता था। उस दिन डिकी और उसके साथी निर्धारित समय पर वहाँ पहुँचे, लेकिन सभ्य स्त्रियाँ टैंक से बाहर निकलने के लिए तैयार नहीं थीं। कैप्टन जुनेजा किनारे पर खड़े बड़ी झुंझलाहट से उन्हें बाहर निकालने की कोशिश करते रहे। इस बहाने वह कर्नल गुरबख्शसिंह की बेटी के साथ बातचीत करने का मौक़ा ढूँढता था शायद। गुरबख्शसिंह की बेटी कुलवंत फ्री-स्टाइल तैरने में बड़ी माहिर थी। 'स्पीड' उसकी कम थी, लेकिन 'स्ट्रोक्स' में बहुत 'ग्रेस' और 'हार्मनी' थी। जुनेजा की बीवी पैर पटकते हुए 'ड्रेस रूम' से बाहर निकली। यह स्त्री जुनेजा की बीवी के रूप में नहीं जँचती थी। ठोस पथरीला चेहरा और बेडौल जिस्म वाली इस स्त्री और जुनेजा की कैसी पटती होगी, यह समझना मुश्किल नहीं था। कैप्टन जुनेजा अपनी बीवी के साथ हो लिया, इसलिए अब सब लोग फ्री थे।

बीच का काफी टाइम फ्री था, इसलिए डिकी हवलदार पिल्लै की क्लास में जा बैठा। पिल्लै अभी आया नहीं था। क्लास के लड़के गप्पें मार रहे थे। डिकी अनिल के पास जाकर बैठ गया। वैसे अनिल पढ़ने में बहुत तेज नहीं था। हवलदार पिल्लै बेंत लिये क्लास में दाखिल हुआ। बेंत एक तरफ़ रखकर उसने बैठते-बैठते एक बार सारी क्लास पर नज़र डाली। डिकी अनिल के साथ खुसुर-फुसुर कर रहा था।

"डिकी, तुम यहाँ क्या कर रहे हो ?"

"सर, आज स्वीमिंग की छुट्टी है। टाइम है, इसलिए...।"

"ठीक है, ठीक है। क्लास में बातचीत नहीं मांगता हूं। अनिल, चलो, 'की' लेकर यहां आओ।"

अनिल चुपचाप उठा। अपनी जगह छोड़कर उठना उसे बहुत खल रहा था। मुंह बनाते हुए वह हवलदार पिल्लै की बग़ल में जा बैठा। पिल्लै ने उससे 'सेंडिंग' करने के लिए कहा। अनिल के हाथ स्थिर नहीं थे, कांप रहे थे, इसलिए सिग्नल लगातार नहीं आ रहे थे, बीच-बीच में कट रहे थे। हवलदार पिल्लै ने अनिल की उँगलियों पर अपनी उँगलियां रखीं और 'की' पकड़ी। अनिल को पींचा ढीला करने को कहकर वह खुद 'सेंडिंग' का 'डिमांस्ट्रेशन' देने लगा। अब स्पष्ट और लयबद्ध सिग्नल सुनायी दे रहे थे। डिकी संदेश ले रहा था, लिख रहा था। दो सिग्नलों के बीच जब ज्यादा अंतर आने लगा तब लिखते-लिखते वह रुका, गरदन ऊपर उठायी और देखा कि अनिल के दायें हाथ पर पिल्लै का दायां हाथ था। इसलिए यह साफ़ था कि हवलदार पिल्लै अनिल से एकदम सटकर बैठा था। उसकी टांगें अनिल की टांगों को छू रही थीं। अनिल और डिकी की नजरें मिलीं। अनिल ने आंखें फेर लीं। उसकी आंखों में शर्म और अपराध का भाव स्पष्ट था।

डिकी देख रहा था। हवलदार पिल्लै की हथेली अनिल की पीठ पर घूम रही थी। आहिस्ता-आहिस्ता नीचे तक खिसक जाती, ओझल हो जाती और फिर ऊपर की तरफ़ उठ आती। डिकी बेचैन था। उसने भरसक कोशिश की कि उसका ध्यान 'रीडिंग' पर लगे, लेकिन वह असफल रहा।

अब डिकी रोज यही क्लास अटेंड करता। अनिल के पास बैठता, मानो अनिल को पिल्लै से दूर रखने की जिम्मेदारी उसी की थी। जब भी पिल्लै अनिल से सटकर बैठता, डिकी को खांसी आना जरूरी था। तब हवलदार पिल्लै उसे तीखी नजरों से देखता, लेकिन डिकी शांत नजरों से उसका जवाब देता। डिकी की पढ़ाई बहुत अच्छी चल रही थी। कैप्टन जुनेजा के साथ उसके बहुत अच्छे संबंध थे। बैरक की डिसिप्लिन के बारे में कोई उस पर उँगली नहीं उठा सकता था।

पिल्लै से उसको कोई ख़तरा नहीं था। उन दोनों के संबंध हमेशा के

तरह ठीक चल रहे थे, लेकिन डिकी को कभी-कभी लगता कि किसी अज्ञात विंदु पर हवलदार पिल्लै और उसके बीच कहीं दुश्मनी है।

एक दिन दोपहर के वक़्त पड़ोस की बैरक वाला शिंदे कैंटीन की तरफ़ से दौड़ता हुआ आता दिखायी दिया। उसने बायें हाथ से अपनी दायीं हथेली दबा रखी थी। दायीं हथेली से ख़ून बह रहा था। वह सीधे कंपनी हवलदार-मेजर (सी०एच०एम०) के कमरे में घुसा। कुछ देर बाद मेजर (सी०एच० एम० और शिंदे मेडिकल रूम की तरफ़ चले गये। कई जवानों ने इस हादसे को देखा था। कुछ लोग सी०एच० एम० के कमरे के पास जमा हो गये थे। वहाँ चल रही बातों से डिकी को पता लगा कि शिंदे कैंटीन की तरफ़ जा रहा था। यूनिट से कैंटीन काफ़ी दूर थी। सड़क पार करके जाना पड़ता था। चलते-चलते वह कैंटीन में गया था। कैंटीन वाले के पैसे चुकाने के लिए उसने जेब से नोट निकाले थे। किसी ने देख लिया होगा। शिंदे कैंटीन तक पहुँचा ही था कि अचानक दो आदमियों ने उस पर हमला किया। शिंदे ने उनका मुकाबला डटकर किया, लेकिन उनमें से एक ने उसका मुँह दबाया और दूसरे ने चाकू से वार किया। हापापाई में शिंदे ज़ख़्मी हो गया। हाथ की उँगलियाँ कट गयीं और पैसे भी चले गये। हालत इतनी ख़राब थी कि उँगलियाँ हमेशा के लिए बेकार हो सकती थीं। इस घटना में डिकी को कुछ गड़बड़ दिखायी दे रही थी। वह शिंदे को क़रीब से जानता था। शिंदे निडर लड़का था। ताकतवर भी था। पहले ही दिन से शिंदे की और उसकी जान-पहचान हो गयी थी। शिंदे का हँसमुख चेहरा हमेशा खिला रहता था। बीच की 'रो' का वह गाईड था। ठिगना कद, गठा हुआ जिस्म, मार्चिंग करते वक्त उसकी जाँघों की पेशियों का उतार-चढ़ाव पैंट के बाहर से भी साफ़ देखा जा सकता था। कुछ गड़-बड़ ज़रूर थी। भरी दोपहरी में चोरों का मिलिटरी एरिया में यह साहस मुमकिन नहीं लग रहा था।

सुबह पता लगा, अस्पताल में दाख़िल करने के बजाय शिंदे को क्वार्टर

गार्ड की प्रिज़न सेल में रखा गया था। धीरे-धीरे सही वारदात का पता लगा।

उस दिन दोपहर को उसने लैट्रीन के पास एक वड़ा-सा पत्थर ढूंढ़ा। दाहिना पंजा पत्थर पर रखकर दूसरे हाथ से तेज़ छुरी चलायी। उँगलियाँ काट डालने की कोशिश थी उसकी। शिंदे को पता था कि उँगलियों के बिना ऑपरेटरी का काम चल नहीं सकता था, और उँगलियाँ कट जाने के वाद उसे 'डिस्चार्ज' मिल सकता था।

कैसी हिम्मत ! कितनी सहनशीलता !छुरी कैसे चलायी होगी उसने ? वार कैसे किया होगा ? छुरी फिसली होगी, खून के फ़व्वारे छूटे होंगे। दर्द वरदाश्त नहीं हुआ होगा। मशीनी करवल में पंजा वढ़ाकर उँगलियाँ कटवा लेना वात और होती है, लेकिन इस तरह उँगलियों को तोड़ देने की कोशिश करना अजीब वात है ! कमाल है शिंदे का ! कौन-सा तमग़ा दिया जाये उसे ? असल में मिलिटरी-लाइफ़से वह भाग रहा था, विलकुल दुम दवाकर। यहाँ वह विलकुल कमज़ोर और डरपोक साबित हुआ था। लेकिन उसकी सहन-शक्ति बिलकुल कमजोर नहीं थी। चिट्ठियों की तरह अलग-अलग 'पीजन-होल' में आदमी की सॉर्टिंग नहीं की जा सकती।

कुछ दिनों के वाद शिंदे को 'डिस्चार्ज' मिल गया। उँगलियाँ ठीक हुईं या नहीं, पता नहीं चला।

अव स्वीमिंग-स्पर्धा का आख़िरी दिन नजदीक आ चुका था। पाँच-पाँच, छः-छः घंटे तैरकर डिकी थककर चूर हो जाता था। पिछले कुछ दिनों से उसने पिल्लै के क्लास में जाना वंद कर दिया था। उस दिन उसे आने में ज़रा देर ही हुई थी। प्लेट उठाकर वह जल्दी-जल्दी मेस में खाना खाने गया था। मेस वंद हो चुका था। सव वर्तन साफ़ करके रख दिये गये थे। सिविल ड्रेस में वह यूनिट के वाहर निकला। मेन गेट के वाहर उसकी सुधांशु से मुलाक़ात हुई। दोनों शहर की तरफ़ चल पड़े। मेन गेट से कुछ दूरी पर 'कॉफ़ी हाउस' में खाना खा लेने का उनका विचार था। वह

होटल में घुसा। होटल में भीड़ कम थी। मंद रोशनी में पाश्चात्य संगीत की लहरें हवा में तैर रही थीं। डिकी ने कोने की मेज चुनी। खाते वक़्त उसका ध्यान सामने वाली मेज पर बैठे जोड़े की तरफ़ गया। उसकी तरफ़ उनकी पीठ थी। वे दोनों एक-दूसरे से सटकर बैठे थे। पुरुष की आकृति उसे जानी-पहचानी लगी। वह कैप्टन जुनेजा था। कैप्टन जुनेजा सिविल ड्रेस में बड़ा स्मार्ट लग रहा था। डिकी चाहता था कि कैप्टन जुनेजा पीछे मुड़कर न देखे। वैसे जुनेजा से वह घबराता नहीं था, लेकिन, अगर जुनेजा उसे यहाँ देख ले तो वह खुद ही इस हालत में शरमा जायेगा—डिकी ने सोचा।

सुधांशु बड़बड़ा रहा था। डिकी ने सुधांशु को इशारा किया। बात सुधांशु के ध्यान में आयी और वह यकायक खामोश हो गया। इस चुप्पी ने ही शायद उसका ध्यान आकर्षित किया होगा। उसने पीछे मुड़कर देखा। डिकी को देखकर वह मुसकरायी, जैसे वह उसे जानती हो। कैप्टन जुनेजा ने भी पीछे मुड़कर देखा और हाथ उठाकर 'हाय' किया। कुलवंत कौर देखने में इतनी चिकनी होगी, डिकी को पता नहीं था। शायद धीमी रोशनी का यह जादू हो। अब यहाँ ज़्यादा देर रुकने का कोई मतलब नहीं था। माना कि जुनेजा स्वभाव से अच्छा आदमी था, फिर भी इस मौक़े पर डिकी का वहाँ मौजूद रहना जुनेजा के लिए रुचिकर नहीं हो सकता था।

सारे रास्ते सुधांशु बड़बड़ाता रहा था।

"डिकी, अब ख़ामोश रहना ठीक नहीं, कुछ करना होगा। अभी उस बच्चे ने दुनिया देखी ही कहाँ है! ज़िंदगी बरबाद हो जायेगी उसकी।"

"देखो सुधांशु, अनिल अब दूधमुँहा बच्चा नहीं है। आज हम यहाँ हैं, कल को दूसरे यूनिट में कौन होगा उसके साथ? हाँ, वहाँ और कोई पिल्लै ज़रूर होगा। अनिल को अगर इसी माहौल में रहना है तो उसे ख़ुद अपना रास्ता तलाशना होगा। उसे खुद अपना फ़ैसला करना होगा। और अगर वह ख़ुद इस हरकत को पसंद करता हो...!"

"डोंट टॉक रबिश[1]! हम दोनों अनिल को बहुत अच्छी तरह जानते हैं।"

---

1. बेवकूफ़ी की बात मत करो!

वे दोनों यूनिट के मेन-गेट तक आ चुके थे। अनिल और विश्वंभरम् वहीं खड़े थे।

"डिकी, अनिल तुमसे कुछ बात करना चाहता है।"

"अनिल, सिर्फ़ एक सवाल मैं तुमसे पूछता हूँ। पिल्लै और मेजर सुब्बाराव की दोस्ती है, तुझे पता है। अगर हम उनके ख़िलाफ़ शिकायत कर दें तो नतीजा क्या होगा, यह तुम समझ सकते हो। हम शिकायत नहीं करेंगे, उसका कोई फ़ायदा नहीं। लेकिन अगर यह क़िस्सा ऊपर तक पहुँचा तो तुम अपनी ज़बान के पक्के रहोगे न ?"

"डिकी, मेरी मदद करो, प्लीज़। उस साले ने 'लाइट्स ऑफ़' के बाद मुझे अपने कमरे पर बुलाया है। हरामी कह रहा था कि यह ऑर्डर है। अगर मानेगा नहीं तो कहीं-न-कहीं फँसा दूँगा।"

"ऑर्डर? माई फ़ुट! आई शैल फ़क् दैट रास्कल[1]!" डिकी भड़क उठा।

"डिकी, मुझे डर लगता है।"

"अनिल, अब सब हम पर छोड़ दो। 'लाइट्स ऑफ़' के बाद तुम ज्ञान-सिंह की खाट पर सो जाना।"

'रम् डे' था उस दिन। यह तय है कि हवलदार उस दिन पीनेवाला था
कुछ लड़कों से बात करके डिकी ने योजना बनायी।

रात के दस बजे थे। 'लाइट्स ऑफ़' की सीटियाँ बज चुकी थीं। बैर
की बिजलियाँ खटाखट बंद हो गयीं। नाइट ड्यूटी करने वाला संतरी पिल
को ओ० के० रिपोर्ट देकर लौट आया। अनिल ने अपनी जगह बदल ली
अनिल के बिस्तर पर ज्ञानसिंह सो गया। उसके एक तरफ़ डिकी अ
दूसरी तरफ़ शर्मा। पाँच मिनट गुज़रे, दस गुज़रे। ये लोग चादरें ओढ़
मच्छरदानियों में लेटे इंतज़ार कर रहे थे। सो जाने का बहाना ब

1. मैं उसकी ऐसी-तैसी करके रख दूँगा।

पिल्लै की राह देख रहे थे। आहट ले रहे थे। डिकी भी इंतजार कर रहा था।

आधा घंटा गुजर गया। पिल्लै का कहीं पता न था। वह अब तक जाग रहा था। उसके कमरे से रोशनी की एक किरण बैरक में आ रही थी। इंतजार करते-करते डिकी थक गया। उसे लगा, अब सो जाना चाहिए। उसने घड़ी देखी। बाकी सभी लोग जाग रहे थे, इसका उसे पूरा भरोसा था। पिल्लै से सभी लोग चिढ़े हुए थे। सभी को पिल्लै पर क्रोध था और घृणा भी।

अगर आज की योजना कामयाब हो जाये, तो क्या पिल्लै ज्यादा खूंखार हो जायेगा? अनिल डरपोक है। थोड़े-से दबाव से शायद वह राज खोल देगा। दरवाजे पर हलकी-सी आहट हुई। लेकिन फिर बिलकुल खामोशी। उसकी आँखें नींद से बंद हुई जा रही थीं।

उसने सुना, ग्यारह के घंटे बज रहे हैं, लेकिन उस पर नींद छायी थी। वह जागते रहना चाहता था। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि वह क्यों जागना चाहता है? अब सो जाने का उसने इरादा किया।

उसे अनिल की पीठ दिखायी दे रही थी। पीठ पर एक हाथ घूम रहा था। पिल्लै का हाथ ऊपर-नीचे हो रहा था। हाथ कुछ तलाश कर रहा था, कुछ ढूंढ रहा था।

डिकी ने चौंककर आँखें खोल दीं। ही विश्ड दैट ड्रीम टु कन्टीन्यू।[1] उसने फिर आँखें बंद कर लीं और पास के बिस्तर से शोर-गुल की आवाज सुनायी पड़ी। ज्ञानसिंह ज़ोर-ज़ोर से चीख रहा था - "चोर चोर!" मच्छरदानी में पिल्लै की आकृति लड़खड़ाती दिखायी पड़ी। फुर्ती से वह मच्छरदानी से बाहर निकला। तब तक पिल्लै चारपाई से परे जा चुका था और दरवाजे की तरफ बढ़ रहा था। डिकी ने पास वाला बड़ा बूट फुर्ती से उठाया और पिल्लै की तरफ फेंका। निशाना ठीक पड़ा होगा, क्योंकि पिल्लै के मुंह से कुछ गालियाँ निकली थीं। डिकी आगे बढ़ा। ज्ञानसिंह ने पिल्लै को पकड़ लिया। शर्मा ने पिल्लै के सिर पर कंबल डाल

---

1. उसकी इच्छा थी कि वह यह स्वप्न देखता रहे।

इया। पिल्लै अंदर छटपटा रहा था। डिकी ने पिल्लै के पेट में घूंसा रगाया। पिल्लै तड़प उठा। शोर मच गया। किसी की समझ में नहीं आ रहा था कि क्या हो रहा है! पाँच-छः लोग 'चोर-चोर' चिल्लाते हुए अनिल की चारपाई की तरफ़ लपके। लाइट जलाने के लिए आते हुए संतरी को भी किसी ने पीट दिया था। छहों बाहर भागे। पहले ही से तय था कि बत्ती जलानी नहीं है।

बैरक की बत्तियां जब जलीं तो पिल्लै वहाँ नहीं था। अनिल अपनी चारपाई पर आकर बैठ गया। खाटें तितर-बितर हो गयी थीं। जूते इधर-उधर बिखरे पड़े थे। विश्वंभरम् के घुटने पर अच्छी-ख़ासी मार लगी थी। सी०एच०एम० दौड़ा-दौड़ा बैरक में आया। बहुत-से लड़के जमा हो गये। अनिल तैयार बैठा था। उसने रिपोर्ट की : "मेरी खाट के पास कोई गड़बड़ कर रहा था। मैं जाग पड़ा। कोई अधेड़ उम्र का आदमी लुंगी में दिखायी पड़ा।" सी० एच० एम० बरामदे में आया। उसने देखा कि पिल्लै के कमरे का दरवाजा बंद था। इतने शोर-गुल के बावजूद पिल्लै कमरे के बाहर नहीं आया था। क्या हुआ होगा, सी० एच० एम० को शायद इसका अंदाज़ा था। "कल देखा जायेगा। अभी चलो, सो जाओ। अपनी-अपनी बैरकों में जाओ।"

उसने लड़कों को दौड़ाया। फिर अँधेरा। डिकी अपने बिस्तर पर लेट गया, लेकिन अनिल और बाक़ी लोग काफ़ी देर तक खुसर-पुसर करते रहे। वे ख़ुश थे।

दूसरे दिन हवलदार पिल्लै किसी को नज़र नहीं आया। उसकी जगह कोई दूसरा हवलदार ड्यूटी पर था। ख़बर मिली कि पिल्लै को रिटायर कर दिया गया था। लेकिन उस घटना को लेकर कोई पूछताछ नहीं हुई। अनिल से किसी ने इसके बारे में कुछ भी नहीं पूछा। सब तेरी भी चुप और मेरी भी चुप।

लगभग डेढ़ महीने बाद एक शाम जब डिकी कॉफ़ी हाउस की तरफ़ जा रहा था, पुलिस की एक जीप उसके पास आकर रुकी। जीप में पिल्लै बैठा हुआ था। वह सिविलियन ड्रेस में था। लगता था, वह कहीं अफ़सर बन गया था, क्योंकि जीप का ड्राइवर उससे बड़े अदब से पेश आ रहा था

"क्यों डिकी, कैसे चल रहा है ?"

पिल्लै खुश था। कुछ देर के लिए गपशप करने के बाद, जाते-जाते उसने कहा, "अच्छा डिकी, सो लांग ! पास्ट इज़ पास्ट[1], मैंने तुम लोगों को माफ़ कर दिया है।"

"माफ कर दिया ? लेकिन आपके माफ करने का सवाल ही नहीं उठता। गलती आपकी थी। शर्मिंदा आपको होना चाहिए। आखिर *मोरैलिटी नाम की कोई चीज है या नहीं ?"*

हवलदार पिल्लै डिकी की तरफ कुछ क्षण देखता रहा। उसके चेहरे पर मुसकराहट थी। उसने कंधे बिचकाये। "जो चाहो समझो...मगर डिकी, डोन्ट डिसीव योरसेल्फ़। आई नो, यू डैम केयर अबाउट मोरैलिटी। यू...यू वेअर जेलस...।"[2]

जीप जा चुकी थी। कुछ क्षण डिकी खड़ा रहा, फिर आगे बढ़ा और बड़बड़ाया, "पिल्लै इज रिअली वेरी गुड—वरना ऐसा कभी हो सकता है ? ऐसे मामलों में सटाइटी लीड्स यू नो व्हेअर[3]।"

---

1. जो बीत गया सो बीत गया।
2. अपने को धोखा मत दो। मैं जानता हूँ कि तुम नैतिकता के बारे में कतई चिंता नहीं करते। तुम्हें तो ईर्ष्या थी।
3. परिस्थिति आपको कहीं नहीं ले जाती।

तीन

ट्रेनिंग की अवधि पूरी हो चुकी थी। डिकी अब 'सिग्नलमैन' बन चुका था। उसने नया यूनिट ज्वाइन कर लिया। दोपहर का वक्त था। नया यूनिट किस स्थिति में होगा, इसका उसे कुछ अंदाज़ा नहीं था। सेक्शन को विदा करते वक्त सुब्बाराव ने कहा था :

"देखो जवानो, आज से तुम लोग ऑपरेटर बनने जा रहे हो, यहाँ की ट्रेनिंग ख़त्म हुई, लेकिन तुम्हारी असली ट्रेनिंग तो यहीं से शुरू हो रही है। यहाँ तुमने जो कुछ पढ़ा है, और कम्युनिकेशन की प्रोसीजर समझी है, उससे 'सिग्नल सेंटर' की प्रोसीजर बिलकुल अलग होगी। वहाँ की डिसिप्लिन एकदम अलग होगी। अगर यूनिट ठीक हो तो तुम्हें अपने ट्रेड का काम मिल सकेगा; नहीं तो क्वार्टर-गार्ड ड्यूटी, ड्रिल, परेड ही करते रहोगे। कोशिश करो कि अपने-अपने ट्रेड में लगे रहो, और इज्ज़त से सर्विस करो।"

डिकी लकी रहा। जिस यूनिट में उसकी पोस्टिंग हुई थी, वहाँ की दो कंपनियाँ 'सिग्नल सेंटर' ड्यूटी पर थीं। दाख़िल होते ही रात को वह ड्यूटी पर हाज़िर हो गया।

'सिग्नल सेंटर', यानी मिलिटरी का पोस्ट-ऑफ़िस—चौबीसों घंटे खुला। आर्मी का लंबा-चौड़ा मामला। कई यूनिट। इन तमाम यूनिटों के बीच कम्युनिकेशन बनाये रखने का काम सिग्नल कोर के ज़िम्मे, आर्मी हेडक्वार्टर और सीमाओं पर फैले हजारों यूनिटों के बीच लाखों शब्दों का आदान-प्रदान—हज़ारों चिट्ठियाँ, टेलीग्राम, ट्रंककाल, संदेश।

रविवार का दिन था। सुबह के आठ बज रहे थे। रेजिमेंट ऑफ़िस के लिए अर्जेंट मैसेज था। डिकी ऑफ़िस की तरफ़ जा रहा था। रास्ते में कंपनी सूबेदार मणि और सूबेदार संगतराम के क्वार्टर पड़ते थे। दोनों बाहर आँगन में खड़े थे। सूबेदार मणि लुंगी पहने, ब्रुश मुंह में दाबे खड़ा था। उसे सैल्यूट करना डिकी को बहुत अखरता था। पर शुरू में ही वह झंझट मोल लेना नहीं चाहता था। इसलिए पास से गुज़रते वक़्त उसने 'मॉर्निंग सर' कहकर सलामी दी। सूबेदार संगतराम ने 'मॉर्निंग' कहकर जवाब दिया। डिकी आगे बढ़ा। पीछे से आवाज़ आयी—

"जवान, इधर आओ।"

डिकी पीछे मुड़कर सूबेदार मणि के सामने खड़ा रहा।

"तुमने सैल्यूट क्यों नहीं किया?"

"मैंने आपको 'गुड मॉर्निंग' विश किया है, सर।"

"लेकिन जवान, मैं पूछ रहा हूँ, तुमने सैल्यूट क्यों नहीं किया?"

डिकी चुप रहा।

"कब आये इस यूनिट में?"

"दो दिन हुए, सर।"

"और दो दिन में यह हालत? ट्रेनिंग सेंटर में क्या यही सिखाया गया है? 'पास आउट' होके आये, या उस्ताद का बूट पॉलिश करते रहे? मैं पूछता हूँ, तुमने सैल्यूट क्यों नहीं किया?"

"सर, ट्रेनिंग सेंटर में यही सिखाया गया था कि सैल्यूट पलंग को दिया जाता है, किसी आदमी को नहीं। सैल्यूट अफ़सर के कंधे पर लगे स्टार को दिया जाता है, आदमी को नहीं। अगर सैल्यूट देने वाला या सैल्यूट लेने वाला इनमें से कोई भी यूनिफ़ार्म में न हो तो सैल्यूट देना ज़रूरी नहीं है।"

"यू शट अप! बकवास मत करो! मुझे आर्मी रूल सिखा रहे हो? तीस साल से नौकरी कर रहा हूँ यहाँ। गोरों के ज़माने में सर्विस की, और तुम कल के छोकरे, सिखाने चले हो मुझे आर्मी रूल! ब्लडी फूल! याद रखो, आर्मी रूल किताबों में रहते हैं, यहाँ सीनियर्स का रूल चलता है। मैं यहाँ अफ़सर हूँ, और तुम सिपाही, ओ॰आर॰, समझे? सीनियर के ऑर्डर को ओबे करना—यही एक रूल है आर्मी का। देख लिया सूबेदार सा'ब?"

सूबेदार मणि कुछ क्षण रुका, फिर वह डिकी पर भौंका :

"सावधान !"

डिकी सावधान की पोज़ीशन में आ गया।

"सैल्यूट !"

डिकी ने सैल्यूट किया।

"डाउन !"

डिकी ने झटके से हाथ नीचे किया।

मणि ने डिकी से पाँच बार सैल्यूट करवाया।

सूबेदार और लेक्चर देने के मूड में था, लेकिन डिकी ने अपनी जेब से लिफ़ाफ़ा निकाला और दिखाकर कहा, "सर, ओ० सी० साब के लिए ओ० पी० मैसेज है।" मणि का चेहरा तमतमा उठा, लेकिन लिफ़ाफ़ा देखकर वह अपना गुस्सा पी गया। "ठीक है, जल्दी जाओ। ओ० सी० एच० एम० से कहना कि वह तुम्हें चार्ज-शीट पर ले आये कल सुबह।"

सुबह नौ बजने से पहले बैरक से डिकी का जुलूस निकला। सी० एच० एम० बहुत दूरंदेश आदमी था। सुबह से डिकी का पीछा करने के लिए एक गार्ड तैनात हो चुका था। आगे सी० एच० एम०, पीछे गार्ड और बीच में डिकी—इस तरह यह बारात रेजिमेंट ऑफ़िस पहुँची।

स्थिति का मुक़ाबला करना होगा। मैं बेक़ुसूर हूँ। मेरी कोई ग़लती नहीं। सज़ा मिलने का कोई सवाल नहीं है, लेकिन सज़ा हो भी जाये, तब भी मैं कुछ नहीं कर सकता। क़ुसूर या बेक़ुसूर, यहाँ इसका कोई महत्व नहीं।

सी० एच० एम० ने डिकी को बेल्ट खोलने के लिए कहा। बेल्ट और कैप सिपाहियों के मानचिह्न होते हैं। इनको उतरवाने का मतलब है सिपाही की बेइज़्ज़ती। सी० एच० एम० प्यारेलाल सूबेदार-मेजर के दफ़्तर में गया और कुछ देर के बाद लौटा। उसके चेहरे पर उकताहट थी उसने डिकी को अंदर आ जाने का इशारा किया। आसार बुरे नहीं थे अगर चार्ज-शीट हो जाती तब तो सी० एच० एम० उसे वहीं से मा कराता हुआ अंदर ले जाता। डिकी, सूबेदार-मेजर के कमरे तक पहुँचा।

"मे आई कम इन, सर ?"

"कम इन !"

डिकी बड़े अदब के साथ अंदर दाखिल हुआ। मेज से पाँच-छः फ़ीट की दूरी पर उसने रोबदार 'थंम' करके सूबेदार-मेजर को सलामी दी।

"गुड मार्निंग, सर !"

"मार्निंग, मार्निंग ...सिगनलमैन डिकी !"

सूबेदार-मेजर अपनी सफ़ेद दाढ़ी-मूँछों में से मुसकराया। सूबेदार-मेजर का यूनिफ़ॉर्म बिलकुल साफ़-सुथरा तो था, लेकिन बहुत कलफ़दार नहीं था। आँखों में शरारत-भरी मुसकराहट।

"तो जवान, यूनिट में दाखिल हुए अभी एक हफ़्ता भी नहीं हुआ है और तुम मेरे सामने आये हो। यह ठीक नहीं। बिलकुल ठीक नहीं। कहाँ के रहने वाले हो ?"

"बंबई, सर।"

"बंबई। बंबई, कहाँ ?"

"ग्रान्ट रोड, सर।"

मेजर ने अपनी सफ़ेद दाढ़ी पर हाथ फेरा।

"ग्रान्ट रोड...बीस साल पहले कुलाबा में था मैं, मैं और जगजीत। कंपाउन्ड वॉल फाँदकर हम बाहर निकल जाते थे। तब सिपाही था मैं।"

सूबेदार-मेजर अतीत में तैर रहा था।

"ग्रान्टरोड, कहाँ हुई यह ?"

डिकी दो क़दम आगे बढ़ा और मेज पर उँगलियों से लकीरें खींचकर कहने लगा—

"यह है कुलाबा, यह वी० टी०, यह वेस्टर्न रेलवे और यह दादर। ग्रान्ट-रोड इसके बीच में है।" उँगलियों से वह पोजीशन दिखा रहा था। सूबेदार-मेजर ध्यान से देख रहा था।

"इसका मतलब दादर ग्रान्टरोड के उत्तर में है ?"

"सर, बंबई में तो कभी नजर उठाके आसमान की तरफ़ देखा ही नहीं। कैसा पूरब और कैसा उत्तर ! लगता है, बंबई में आसमान है ही नहीं।"

सूबेदार-मेजर खुलकर हँसा, "हाँ भैया, स्टेशन के पास जो ऊँची-

ऊँची बिल्डिगें हैं न, उनमें खब्बे हाथवाली बिल्डिंग के पास हम जमा होते थे और वहीं से...।"

...सूबेदार-मेजर अब वर्तमान में आ चुका था। उसने गर्दन उठाकर डिकी को देखा। डिकी पीछे खिसका और तनकर खड़ा हो गया।

"ओ गुन्डे, मैं बोलता ही रहा। किसलिए आये थे तुम यहाँ?"

"सर...!"

"यस! देखो जवान,...बड़े लोगों की इज़्ज़त रखना चाहिए। आर्मी रूल्स तो हैं ही। हम आर्मीमेन तो हैं ही, लेकिन पहले हम इन्सान हैं। ठीक है न? देखो, दुबारा ऐसा नहीं होना चाहिए। यह फ़र्स्ट वार्निंग है। जाओ, सी० एच० एम० को अंदर भेज दो।"

डिकी बाहर आया और सी० एच० एम० के पास गया।

"मेजरजी, आपको अंदर बुलाया है।" उसकी बेल्ट और कैप उसे देकर सी०एच०एम० अंदर चला गया। बेल्ट लगाते वक़्त प्रश्नात्मक मुद्रा में खड़े गार्ड से डिकी ने कहा, "चलो बेटा, तुम्हारी छुट्टी हुई।"

"क्यों, क्या हुआ?"

"अपना उस्ताद कहता था, जवान, आर्मी में इज्जत से नौकरी करनी है तो एक पाँव बैरक में रखो, दूसरा क्वार्टर-गार्ड सेल में। इज्ज़त से सर्विस करनी है तो बेइज्ज़ती से डरो मत।"

डिकी मन-ही-मन मुसकराता बैरक की तरफ़ चल पड़ा।

सुबह से ज़ोरदार तैयारियाँ चल रही थीं। जवानों ने बढ़िया यूनिफ़ार्म पहन रखे थे। आज नौ बजे सालाना 'शपथ-परेड' होने वाली थी। सेक्शन कमांडरों ने अपने-अपने सेक्शन के जवानों की चेकिंग की---यूनिफ़ार्म्स, बटन, बेल्ट के बकल्स, कैप, कैप के बैज, बूट, जूतों की पॉलिश, तस्मे, दाढ़ी, कटिंग... डिकी ने मशीन से बालों की कटिंग नहीं करायी थी। उसे पीछे धकेल दिया गया।

चेकिंग ख़त्म होने के बाद कमांडरों ने अपने-अपने सेक्शन 'सावधान'

की पोज़ीशन में खड़े कर दिये और सी०एच० एम० को 'ओ० के० रिपोर्ट' दी।

सी० एच० एम० ने अपनी कंपनी को 'सावधान' की पोज़ीशन में खड़ा किया और रेजिमेंट के सूबेदार-मेजर को अपनी 'कंपनी' 'ओ०के०' होने की रिपोर्ट दी।

सूबेदार-मेजर ने रेजिमेंट को 'सावधान' की पोज़ीशन में खड़ा किया और एक बार सब जवानों पर नज़र दौड़ायी। यकायक वह ज़ोर से चीखा :

"कौन हिल रहा है ? हिलो मत उधर। नायक तेजसिंह, बैक अप, क्यों हिल रहे हो ? हिलो, मत !"

कुछ क्षण शांति, किसी ने धीरे से, लेकिन सूबेदार को सुनायी पड़ने भर की काफी ज़ोर से कहा, "साब, नायक तेजसिंह छुट्टी गया है, साब।"

पूरी यूनिट में हँसी की एक हलकी-सी लहर दौड़ गयी, लेकिन सूबेदार-मेजर के चेहरे पर कोई शिकन नहीं थी। वह गुर्राया—

"फिकर नहीं। नायक तेजसिंह, हिलो मत !"

सूबेदार-मेजर ने मुड़कर एड्ज्यूटेंट को रिपोर्ट किया। सूबेदार-मेजर ने सारी उम्र आर्मी में बितायी थी। उसे पता था कि अफ़सर अपना ऑर्डर कभी वापस नहीं लेता। एक बार निकला हुआ ऑर्डर कैंसिल नहीं होता। ऑर्डर का कैंसिल होना, गलत फैसले का सबूत है, और आर्मी में फ़ैसले ग़लत नहीं होते। मिलिटरी में 'ऑर्डर इज़ काउंटरमैंडिड बट नेवर कैंसिल्ड।'[1]

इसके बाद एड्ज्यूटेंट ने सी० ओ० को रिपोर्ट किया कि उसकी रेजिमेंट शपथ-परेड के लिए तैयार है। हर साल शपथ लेने का यह समारोह ढिकी को बड़ा हास्यास्पद लगता था। ऐसा लगता था, जैसे हर साल बीमारियों को रोकने का टीका लगवाया जाना हो। बस शपथ ले लो तो पूरा भरोसा हो जायेगा कि साल-भर फौज में कोई डरपोक, स्वार्थी और देशद्रोही पैदा नहीं हो सकता। अचूक टीका है। दो दिन पहले से शपथ-

---

1. सेना में आदेश को कभी कैंसिल नहीं किया जाता, केवल प्रत्यादेश दिया जाता है।

परेड के समारोह की तैयारियाँ चल रही थीं। ग्राउंड पर लाउडस्पीकर लगे थे। माईक पर सी० ओ० साहव खड़े थे। उन्होंने वोलना शुरू किया—

"मैं पढ़ता जाऊँगा। मेरे पढ़ने के वाद सव एक साथ एक आवाज़ में दोहरायेंगे।...शुरू...मैं...।" सी० ओ० कुछ देर रुका। 'मैं' एक आवाज़ में सवने दोहराया। इसके वाद हर एक को अपना नाम और नंवर वताना था। कुछ देर यह सिलसिला चलता रहा।

सी० ओ० के होंठ हिल रहे थे। सामने वाली क़तार के होंठों की हरकत दिखायी दे रही थी। पीछे की लाइन वाले लोगों को कुछ दिखायी नहीं दे रहा था। सुनायी भी नहीं दे रहा था। ऐन नाज़ुक मौक़े पर लाउडस्पीकर ख़राव हो गया था। सी०ओ० साहव के ध्यान में यह वात नहीं आयी। पूरी यूनिट को गूंगों की तरह सामने खड़ा देखकर उनकी भौंहें तन गयीं।

एड्ज्युटेंट सूवेदार-मेजर के ध्यान में यह वात आ चुकी थी। लेकिन परेड सी० ओ० के कमांड में थी, उसके नहीं, उसने मेकैनिक को इशारा किया। सामने वाली लाइन के लोगों ने देखा कि सी० ओ० साहव वेचैन हैं। जिन लोगों को सी० ओ० साहव के अस्पष्ट शव्द सुनायी दिये थे, उन्होंने दोहराना शुरू किया। लेकिन पता लगा कि पीछे के लोग नहीं वोल रहे हैं, तो वे भी ख़ामोश हो गये। सव परेशान थे। गड़वड़ क्या थी, यह वात सवकी समझ में आ चुकी थी। लेकिन गुत्थी कैसे सुलझायी जाये, यह किसी की समझ में नहीं आ रहा था। मशीनें वंद पड़ चुकी थीं। शायद यह वात सी० ओ० की समझ में आ चुकी थी, इसलिए उन्होंने अपनी आवाज़ ऊँची की और फिर से पहली लाइन दोहरायी। इसी दौरान, मेकैनिक एम्प्लिफ़ायर के पास पहुँच चुका था। उसने लूज़ कॉन्टैक्ट पर टेप लगाया। माईक पर 'हमेशा करूँगा' ये शव्द ऊँची आवाज़ में सुनायी पड़े। आगे की कुछ क़तारों ने पूरी पंक्ति ठीक सुनी थी। वे इसे दोहराने लगे। पीछे के जवानों ने सिर्फ़ 'हमेशा करूँगा' इतना ही सुना था। वे उसे दोहराने लगे। गड़वड़ हुई। विभिन्न सुरों में अलग-अलग वक़्फ़े से 'हमेशा करूँगा' ...'हमेशा करूँगा' की आवाज़ें आने लगीं। डिकी अपनी हँसी रोक नहीं पाया। हँसी दवाने की कोशिश में उसका चेहरा विचित्र हो रहा था।

लेकिन मौके का लाभ उठाकर उसने 'हमेशा हँसूँगा', 'हमेशा हँसूँगा' की शपथ कई बार दोहरायी। गड़बड़ी मची देखकर सी० ओ० ने तुरन्त फ़ैसला किया और एड्‌ज्युटेंट को रेजिमेंट का कमांड सँभालने को कहकर वह वहाँ से चल दिया।

एड्‌ज्युटेंट ने रेजिमेंट को एक-दो बार 'सावधान', 'विश्राम' किया। लेकिन परेड का क्या होना था, इसके बारे में सी० ओ० का कोई हुक्म नहीं था। एड्‌ज्युटेंट ने रेजिमेंट को सूबेदार-मेजर के हवाले कर दिया और बड़ी फुर्ती से सी० ओ० के पीछे दौड़ा। सूबेदार-मेजर काफ़ी अनुभवी थे। उन्होंने रेजिमेंट को रेजिमेंटल हवलदार मेजर के नियन्त्रण में सौंपा और खुद एड्‌ज्युटेंट के पीछे दौड़ पड़े। रेजिमेंटल हवलदार-मेजर ने रेजिमेंट को 'विश्राम' की पोज़ीशन में खड़ा किया और रेडियो मैकेनिक को फटकारने लगा। सीढ़ी-दर-सीढ़ी नीचे के अफ़सर पर अपनी ज़िम्मेदारी धकेलने का यह क्रम बड़ी डिसिप्लिन के साथ पूरा हुआ था। लेकिन इसके बाद? 'शपथ-परेड' शुरू की जाये या नहीं? या परेड को ख़त्म मानकर 'डिस्पर्स' का आदेश दे दिया जाये? सी० ओ० साहब लौटकर आने वाले हैं या नहीं? इन सवालों के जवाब किसी के पास नहीं थे। हर किसी ने अपनी ज़िम्मेदारी अपने मातहत के हाथों में सौंपकर अपना छुटकारा कर लिया था। अब साढ़े ग्यारह बजने को थे। सुबह साढ़े सात से जवान धूप में खड़े थे।

ार

योजनाएँ शुरू हुईं। उसका उत्साह बढ़ रहा था। लेकिन उसके साथी खुश नहीं थे। क्योंकि अब रात-दिन काम, सफ़र और खाने-पीने की तकलीफ़ ज़रूर होने वाली थी। लेकिन रूटीन में फ़र्क़ पड़ने जा रहा था, इसलिए वह बहुत खुश था। उसकी डिवीज़न अपनी मूल जगह से सौ-डेढ़ सौ मील दूर आगे निकल चुकी थी। युद्ध की ड्रेस-रिहर्सल शुरू थी। पड़ोस में चंद मील की दूरी पर दुश्मन की डिवीज़न का इलाक़ा पड़ता था। ऊँचे स्तर पर हर यूनिट की कारंवाई की योजना तैयार की जा रही थी। उनकी हलचलें नोट की जा रही थीं। दोनों पक्षों की डिवीज़नें एक-दूसरे को शह देने की कोशिश में थीं। आर्मी हेडक्वार्टर से इनकी हरकतों पर नज़र रखी जा रही थी। कई कंपनियाँ, सेक्शन और प्लैटून बीस-बीस, तीस-तीस मील की यात्रा करके अपने ठिकाने बदल रहे थे। मोबाइल क्वार्टर कोर की अड़चनें, अलग-अलग प्रदेशों की भौगोलिक विशेषताएँ, फ़ौजी दृष्टि से अलग-अलग हिस्सों का महत्व आदि छोटी-छोटी बातों पर ध्यान दिया जा रहा था। नक़्शों पर रंगीन माथे की पिनें लगाकर यूनिटों की आगामी कारंवाई का संकेत दिया जा रहा था।

उसकी कंपनी उस खेत में पिछले कई दिनों से डेरा डाले पड़ी थी। वहाँ पहुँचने पर ऑपरेटरों ने दो दिन तक गढ़े खोदने का काम किया। अफ़सर कभी डाँटते, कभी गुस्सा करते तो कभी पुचकार कर उनसे काम लेते। सिग्नल सेंटर को अंडरग्राउन्ड कर लिया गया था। गढ़े खोद-खोद

चार

योजनाएँ शुरू हुईं। उसका उत्साह बढ़ रहा था। लेकिन उसके साथी खुश नहीं थे। क्योंकि अब रात-दिन काम, सफ़र और खाने-पीने की तकलीफ़ ज़रूर होने वाली थी। लेकिन रूटीन में फ़र्क़ पड़ने जा रहा था, इसलिए वह बहुत खुश था। उसकी डिवीज़न अपनी मूल जगह से सौ-डेढ़ सौ मील दूर आगे निकल चुकी थी। युद्ध की ड्रेस-रिहर्सल शुरू थी। पड़ोस में चंद मील की दूरी पर दुश्मन की डिवीज़न का इलाक़ा पड़ता था। ऊँचे स्तर पर हर यूनिट की कारंवाई की योजना तैयार की जा रही थी। उनकी हलचलें नोट की जा रही थीं। दोनों पक्षों की डिवीज़नें एक-दूसरे को शह देने की कोशिश में थीं। आर्मी हेडक्वार्टर से इनकी हरकतों पर नज़र रखी जा रही थी। कई कंपनियाँ, सेक्शन और प्लैटून बीस-बीस, तीस-तीस मील की यात्रा करके अपने ठिकाने बदल रहे थे। मोबाइल क्वार्टर कोर की अड़चनें, अलग-अलग प्रदेशों की भौगोलिक विशेषताएँ, फ़ौजी दृष्टि से अलग-अलग हिस्सों का महत्त्व आदि छोटी-छोटी बातों पर ध्यान दिया जा रहा था नक़्शों पर रंगीन माथे की पिनें लगाकर यूनिटों की आगामी कारंवाई क संकेत दिया जा रहा था।

उसकी कंपनी उस खेत में पिछले कई दिनों से डेरा डाले पड़ी थी वहाँ पहुँचने पर ऑपरेटरों ने दो दिन तक गढ़े खोदने का काम किय अफ़सर कभी डाँटते, कभी गुस्सा करते तो कभी पुचकार कर उनसे व लेते। सिग्नल सेंटर को अंडरग्राउन्ड कर लिया गया था। गढ़े खोद-खं

कर कंधे और कमर दर्द करने लगे थे। तीस फुट लंबे, दस फ़ुट चौड़े और आठ फ़ुट गहरे गड्ढे में सिग्नल सेंटर छिपा था। तमाम दिन परिश्रम करने के बाद रात में नाइट-सेन्ट्री की ड्यूटी करनी पड़ती थी, सो अलग। डिकी काम से कभी कतराता नहीं था। यहाँ भी कामचोर और चापलूस लोग मौजूद थे, उन्हें तो आराम मिल ही जाता था। दो-ढाई सौ गज की दूरी पर ओ० आर० के टेन्ट थे। थोड़ी दूरी पर इधर की तरफ़ अफ़सरों के डेरे थे। टेन्टों के अहाते में छोटी मेज़ें और कुर्सियाँ पड़ी थीं। यह एरिया उनकी रेजिमेंट से अस्सी-नब्बे मील की दूरी पर था। यहाँ मानो फ़ील्ड एरिया का पूरा हेडक्वार्टर खड़ा कर दिया गया था। उसका एक्सचेंज सिग्नल एक्सचेंज से जोड़ दिया गया था।

स्कीम शुरू हो चुकी थी। पहले ही दिन उसे इस जगह भेजा गया था। वे अपनी जीप में ट्रांसमीटर रखकर यहाँ दाखिल हुए थे। उसके साथ दो ऑपरेटर और एक ड्राइवर था। बिलकुल ठीक वक़्त पर उनकी जीप यहाँ पहुँच चुकी थी। उसके सभी साथी अपने धंधे में होशियार थे। ड्राइवर रूर्दासिंह और डिकी दोस्त थे। जीप रुकी और उसने बड़ी मुस्तैदी से तीस फुट वाला 'एरिअल मास्ट' खड़ा किया और सेट ऑन किया। उसकी तक़दीर अच्छी थी। कंट्रोल स्टेशन से सम्पर्क स्थापित करने में वह कामयाब हो गया। कुछ ही मिनट में अस्सी मील की दूरी पर स्थित कंट्रोल स्टेशन को उसने रिपोर्ट किया कि वह निर्धारित जगह पहुँच गया है। कंट्रोल को उसके सिग्नल बहुत साफ़ मिल रहे थे, लेकिन कंट्रोल से वापस आने वाले सिग्नल कमज़ोर थे, पर यह स्वाभाविक था, क्योंकि रास्ते में ग्यारह के०वी० की हाइटेंशन लाइन आड़ी दिशा में जाती थी। रिपोर्ट कर चुकने के बाद उसने कंट्रोल वाले नायक से उधर का हालचाल पूछा। 'मोर्स-की' पर उसकी उँगलियाँ फुर्ती से चल रही थीं। डा-डिट्-डा ..डा-डा-डा...डिट्-डिट्-डा...डिट्-डा-डिट्।

एक-डेढ़ मील को दूरी पर मिलिटरी ट्रकों के काफ़िले बीच-बीच में दिखायी पड़ रहे थे। दूसरे दिन सफ़ेद झंडा फहराती एक जीप उनके करीब आकर रुकी। बाँह पर 'सफ़ेद पट्टी' लगाये मेजर साहब जीप से उतरे। दो डिविज़नों के बीच अनुशासन, काम के तरीके और मूवमेंट पर प्रत्यक्ष नज़र

रवने वाला अम्पायर स्क्वाड का एक अफ़सर भी उतरा। उसने डिकी को
फ़ी परेशान किया। सांकेतिक नामों के बारे में पूछताछ की, ट्रांसमीटर
की बैटरियाँ, स्टेशनरी, एरिअल मास्ट, डेली रेकार्ड और कई दूसरे काग़ज़ात
आदि छोटी-मोटी चीज़ों की जाँच करके वह टेन्टों की तरफ़ चल दिया।
उसने महसूस किया कि टेन्टों के चारों ओर खुदी 'स्नेक ट्रेन्चों' की गहराई
कुछ कम थी। अंदर की ज़मीन भी समतल नहीं थी। 'फ़र्स्ट एड' और
'डिसिप्लिन' पर ऊबा देने वाला छोटा-सा भाषण झाड़कर और सैल्यूट
लेकर उनकी जीप धूल उड़ाती हुई निकल गयी। दो दिन शांति से गुज़रे।

तीसरे दिन कुछ तीन टन वाले ट्रक वहाँ आ पहुँचे। गाड़ियों से उतरते
ही जवान फटाफट काम में जुट गये। टेन्ट गाड़े गये। एक तरफ़ आर्मी
मेडिकल कोर का मेडिकल-रूम बन गया, इसके अलावा दूसरे रिसालों के
जवान भी वहाँ मौजूद थे। उन्होंने अपने-अपने टेन्ट गाड़े। दूसरे दिन शाम
तक वहाँ तीस-चालीस टेन्ट खड़े थे। पास ही के इनफैंट्री यूनिट वाले कर्नल ने
अपने सिग्नल यूनिट को कुछ संदेश भेजे। सुबह पाँच बजे ट्रांसमीटर ऑन
करके कंट्रोल-रूम से संपर्क स्थापित करना पड़ता था। फिर तमाम दिन
दो-दो घंटे के अंतराल से कॉल चालू रहते, संदेश आते-जाते रहते। वहाँ
एक बात अच्छी थी, काम बहुत था, लेकिन यूनिफ़ार्म की इस्त्री कोई चेक
नहीं करता था। जूतों की पालिश और ब्रास की चमक कोई नहीं देखता
था। दाढ़ी के खूंट निकल आये थे, फिर भी किसी को शिकायत नहीं थी।

पाँचवे दिन आठ बजे रात को डिकी ने कंट्रोल-स्टेशन को अपना आख़िरी
संदेश भेजा, रूटीन रेकॉर्ड तैयार किया। नौ बजे वाले कॉल अटेंड न करने
की इजाज़त उसने पहले ही माँग ली थी। कंट्रोल-स्टेशन ने उसे आगामी
सुबह के पाँच बजे वाला कॉल देकर गुडनाइट किया था। डिकी ने रूढ़सि
को आवाज़ दी। दोनों ने मिलकर ट्रांसमीटर-सेट जीप के बाहर किया
बैटरियाँ निकाल दीं। पूरा सामान निकाल लिया। जीप का पिछ
हिस्सा खाली था। डिकी के दूसरे दो साथी सोने की तैयारी में थे।

डिकी की योजना पसंद नहीं थी, लेकिन नाराज होने के अलावा वे कर भी क्या सकते थे ? डिकी सीनियर था, इसलिए वे उससे दबे रहते थे, यह सही था कि अगर कुछ बखेड़ा खड़ा हो जाता तो उन्हें भी परेशान होना पड़ता। डिकी को अपनी बेवकूफी का पता था, पकड़े गये तो चौदह या इक्कीस दिन की सज़ा काटनी पड़ेगी। रूद्रसिंह भी बच नहीं पायेगा। कुछ भी हो, टेंट की पूरी ज़िम्मेदारी तो डिकी की ही थी।

रात के अँधेरे में वे अपनी जीप को धकेलकर रोड पर ले आये। रूद्रसिंह का गाँव वहाँ से सिर्फ़ बीस मील की दूरी पर था। गाँव मेनरोड से ज़रा हटकर था। पर रास्ता अच्छा था। लेकिन मुसीबत यह थी कि वह गाँव 'दुश्मन की' डिवीज़न के इलाक़े में पड़ता था। मेनरोड से गुज़रना ख़तरे से ख़ाली नहीं था। चक्कर काटकर ही पहुँचना पड़ेगा। रूद्रसिंह घर जाने के लिए उतावला था। शादी के फ़ौरन बाद उसकी छुट्टी कैंसिल कर दी गयी थी। 'मूठमूठ की' इस लड़ाई में शरीक होने के लिए लौट आना पड़ा था।

जीप को धकेलकर वे काफ़ी दूर तक ले आये थे। अगल-बग़ल वाले टेन्ट पीछे छूट चुके थे। रूद्रसिंह ने जीप चालू की। गाँव पहुँचने तक साढ़े ग्यारह बज चुके थे। डिकी ने रूद्रसिंह को आगाह किया, "देखो, याद रखो, किसी भी हालत में तीन बजे जीप यहाँ से चल पड़नी चाहिए।" रूद्रसिंह ने उससे घर चलने का अनुरोध किया, लेकिन डिकी ने इन्कार कर दिया। रूद्रसिंह के हिस्से में सिर्फ़ साढ़े तीन घंटे बचे थे। इतने कम समय में कब घर के लोगों को उठायेगा, कब माँ-बाप और भाई-बहनों से बातचीत करेगा, और फिर कब बीवी को अलग ले जाकर उसके संग सोयेगा ?

स्टियरिंग व्हील पर सिर टिकाकर डिकी ने आँखें बंद कर लीं। ग्रेटकोट में दुबककर वह आराम से सो सकता था, लेकिन रूद्रसिंह पर भरोसा करने को वह तैयार नहीं था। बीच-बीच में नींद खुल जाने पर वह घड़ी की तरफ़ देखता।

उसकी आँख खुली। चाँद पश्चिम की तरफ़ झुक चुका था। पौने तीन बजने को थे। भोर पहर की ठंडी हवा बह रही थी। जीप से नीचे उतरकर

...ाहट थी। दूर से कुत्तों के भौंकने की आवाज़ें आ रही थीं। बड़े
...न भाव से वह गली के नुक्कड़ तक गया, और फिर रूढ़सिंह के
...में आकर खड़ा रहा। पांच मिनट बीते, दस मिनट बीते। मिनट की
...बारह पर आ चुकी थी। तीन बज चुके थे। वह बेचैन हो रहा था।
...आई हैव टु डू इट। मेरे बस की बात होती तो, बेटाजी, मैं तुम्हें दिन
...निकलने तक तकलीफ़ न देता। लेकिन...ओ० के०, पांच मिनट गये।"

उसे ठंड लग रही थी। वह दरवाज़े तक पहुंचा और धीरे से किवाड़ खोले। किवाड़ चरमराये। गरदन अंदर करके उसने धीरे से आवाज़ लगायी, "रूढ़सिंह...रू...ढ़...सिंह...!" कोई जवाब नहीं मिला। उसने महसूस किया कि वरामदे के दायीं तरफ़ के कमरे में कुछ खुसर-फुसर चल रही है। "रूढ़सिंह, चलो भाई, तीन वजे हैं, जल्दी करो।"

वह लौट आया और दीवार से पीठ टिकाकर इंतज़ार करने लगा। पांच मिनट और निकल गये. अब उसे झुंझलाहट हो रही थी। किसी की भावनाओं का ध्यान रखने का यह समय नहीं था। वह फटाक-से मुड़ा, अंदर दाख़िल हुआ, कमरे के क़रीब गया और दीवार से मुंह सटाकर चीख...
"रूढ़सिंह के वच्चे, ब्लडीफ़ूल जल्दी करो, वेवकूफ़ी मत करो।" भीतर...
रूढ़सिंह की दवी-दवी आवाज़ आयी, "वस, दस मिनट उस्ताद, प्लीज़...
अंदर की खुसर-पुसर और हरकतें साफ़ सुनायी दे रही थीं। एक झ...
वह कुछ क्षण के लिए पीछे हट गया और दरवाज़े पर हाथ रखकर इं...
में खड़ा रहा। फिर जूतों को फ़र्श पर पटकते हुए वह वरामदे ...
आया और खिड़की के पास जाकर तेज़ आवाज़ में कहने लगा, ...
भगवान के लिए उस सुअर को वाहर निकालो। अभी, इसी वक़्त...

वह वाहर चला आया और जीप में आकर बैठ गया। प...
वीत चुके थे, रूढ़सिंह वाहर निकल आया था। उसके साथ ...
थी। सुवह की धुंधली रोशनी में उनकी शक्लें धुंधली-धुंधली न...
थीं। दरवाज़े के पास आकर वीवी ने उसके कंधे ज़ोर से प...
लिपट गयी। सिसकियां दवाने की कोशिश में उसका शरीर...
रूढ़सिंह उसे समझा रहा था। उसने वीवी को धीरे से अ...
ही क्षण के लिए वह उससे अलग हुई थी, पर फिर दुगने...

लिपट गयी। उम्र में वह बहुत छोटी मालूम पड़ रही थी। रूद्रसिंह बड़ी लाचारी से डिकी की तरफ़ देख रहा था। उसने औरत की पीठ पर हाथ फेरा। दबी आवाज में वह उसको कुछ समझा रहा था। डिकी ने अपनी घड़ी देखी। पौने चार बज रहे थे। साढ़े चार बजे सारे जवान खंदकों में जाने वाले थे। डिकी ने नजरें फेर लीं। स्टियरिंग व्हील के बीच में उसने अपनी मुट्ठी जोर से मारी। पोऽऽऽ—हॉर्न बजा। जब उसे पता चला कि रूद्रसिंह आकर बगल में बैठ गया है तो उसने कहा, "आई ऐम सॉरी!" रूद्रसिंह ने गाड़ी स्टार्ट की। उसकी नजर सामने थी।

उसी रास्ते से लौटने का मतलब था, पहुँचते-पहुँचते साढ़े पाँच बज जाते। तब तक तो सभी जवान खंदकों में दाखिल हो चुके होंगे। अम्पायर लोग मुआइने में लगे होंगे। मिलिटरी-पुलिस तो होगी ही। उसी रास्ते से गुजरना खतरे से ख़ाली नहीं था। पकड़े जाने का बहुत डर था। हर हालत में वक़्त पर तो पहुँचना ही होगा। डिकी ने फ़ैसला किया, "रूद्रसिंह, जीप सीधे मेनरोड से ले लो।"

जीप तेजी से भागी चली जा रही थी। कुछ ही मिनट में वे मेनरोड पर थे। मोड़ से कुछ उधर की तरफ़ 'चेक पोस्ट' दिखायी दे रहे थे। लालटेन के उजाले में संतरी की छाया साफ़ दिखायी पड रही थी। "स्पीड बढ़ाओ!" डिकी ने हॉर्न बजाया। संतरी के दिमाग़ में कुछ आने से पहले ही जीप आगे निकल चुकी थी। डिकी ने इतमीनान की साँस ली। लेकिन असली ख़तरा तो आगे था। अभी 'एनिमी एरिया' चल रहा था। सीमा पर दोनों पक्षों के 'चेक पोस्ट' होंगे। इस रास्ते चले आने का फ़ैसला ग़लत तो नहीं था? इतनी तेज सर्दी के बावजूद डिकी के माथे पर पसीने की बूँदें थर्रा रही थीं।

सड़क के मोड़ पर, उसने देखा कि एक जीप खड़ी थी। खेल ख़तम! यह जीप अम्पायर स्क्वाड के सिवा किसी की नहीं हो सकती। सड़क के एक किनारे खंभे पर लालटेन लटक रही थी। लालटेन की मद्धिम रोशनी में संगीन लिये संतरी खड़ा था। वह इन्हीं की जीप की तरफ़ देख रहा था। शायद जीप की आवाज सुनकर वह चौकन्ना हो गया था। चूँकि संतरी एक ही जगह पर खड़ा था, इसलिए आगेवाली जीप में किसी के होने की

संभावना नहीं थी। रास्ता रोकने वाली वल्ली ऊपर उठी हुई थी। उस पर लगी लालटेन अधर में लटक रही थी। अव संतरी रोड के वीचोंवीच आ गया था। डिकी ने रूढ़सिंह को देखा। उस अँधेरे में भी वह पहचान गया कि रूढ़सिंह पसीने से तर है। डिकी ने उसका कंधा थपथपाया। "इंजन वंद न करना।" उसकी आवाज में कुछ थरथराहट थी। शायद आगेवाली जीप 'अम्पायर' की नहीं थी, क्योंकि वह ख़ाली थी। संतरी अपनी जगह से हिला। वह जीप की तरफ़ वढ़ रहा था। डिकी फुर्ती से पीछे मुड़ा। उसने स्टेशनरी में से मैसेज-पैड उठाया और उसे हाथ में लेकर पन्ने उलटते हुए वह आगे वढ़ा। उसने ग्रेटकोट पहन रखा था, इसलिए उसका यूनिफ़ार्म दीख नहीं सकता था। उसकी वेरे कैप अफ़सर-टाइप वनपीस की थी। जीप से सात-आठ फ़ुट पर उसने संतरी को टोका। राइफ़ल आड़ी करके 'त्तान शस्त्र' की पोजीशन में संतरी उसे चैलेंज करने को ही था कि डिकी उस पर गरजा, "संतरी, यह जीप रास्ते में क्यों खड़ी है? वेवक़ूफ़, कौन है तुम्हारा गार्ड कमांडर? वुलाओ उसे यहाँ। कहो, मेजर साव वुलाता है। दौड़ो, क्विक!"

कुछ क्षण के लिए संतरी भ्रम में पड़ गया। उसने जीप की तरफ़ देखा, फिर डिकी की तरफ़ देखा, और एकदम टेन्ट की दिशा में दौड़ पड़ा। डिकी पीछे मुड़ा। "रूढ़सिंह...!" झपटकर जीप आगे वढ़ी, और सड़क पर भागने लगी।

पीछे संतरी की आवाज आ रही थी, "गार्ड कमांडर,...गार्ड कमांडर!" रूढ़सिंह ने वुलेट की रफ़्तार से जीप छोड़ रखी थी। वह अपने ठिकाने से एक फलाँग इधर आकर ही रुका।

दोनों के वदन से पसीना वह रहा था। डिकी जीप के पीछे गया। रूढ़सिंह एक हाथ से स्टियरिंग सँभाले, गाड़ी ढकेल रहा था। चार वज-कर वीस मिनट हो चुके थे। जवान जूते पहनने में लगे होंगे। इस वक़्त उनका ध्यान विचलित नहीं हो सकता था। दस मिनट वाद सीटी वजने वाली थी। कैंप का हर जवान खंदक में दाख़िल होने वाला था। दोनों की साँस फूल रही थी। डिकी को लग रहा था, कहीं उसकी छाती फट न जाये। हर क्षण क़ीमती था। अव जीप एरियल-मास्ट तक पहुँच चुकी थी।

उसके साथी टेन्ट के बाहर खड़े थे। वे टेन्ट की तरफ़ दौड़े और ट्रांसमीटर लेकर जीप की तरफ़ लपके। सीटी बजी। सीटी की तेज़ धार अंधेरे को चीरती हुई चारों ओर फैल गयी। रूद्रसिंह दौड़कर टेन्ट में घुसा। तीनों राइफ़लें लेकर ख़ंदक की तरफ़ दौड़े। डिकी ने फुर्ती से ट्रांसमीटर का एरियल जोड़ा। उसके साथियों ने जीप में बैट्री फेंकी और ख़ंदक की तरफ़ दौड़ पड़े। डिकी ने सेट ऑन किया। कुछ ही मिनटों में कन्ट्रोल-सेंटर से जाने-पहचाने सिग्नल सुनायी देने लगे। उसने फ्रीक्वेन्सी-मीटर ट्यून किया। 'की' पर उसकी उँगलियाँ दौड़ रही थीं। बायें हाथ से उसने रूद्रसिंह का हैवरसैक खोला, रम की बोतल निकाली, दाँतों से सील तोड़ी। कोरी रम का एक घूँट गले को जलाता हुआ उसके पेट में उतर गया।

उसके बाद तीन दिन के भीतर-भीतर वहाँ एक पूरी कंपनी दाखिल हो चुकी थी। कैप्टन भारद्वाज भी आया था। उसने सभी ऑपरेटरों को काम पर लगाया। अंडरग्राउन्ड सिग्नल सेंटर बनाया गया। डिकी अब ऑपरेटरों के साथ अंडरग्राउन्ड सिग्नल सेंटर में काम कर रहा था।

'स्कीम' ख़त्म हो जाने पर उसकी कंपनी जब वापस लौटी तब तक कैप्टन भारद्वाज मेजर हो चुका था। उसकी कंपनी ने 'कम्युनिकेशन' बहुत बढ़िया मेनटेन किया था। रात-दिन ड्यूटी करके ऑपरेटरों के चेहरे फीके पड़ गये थे। जिस्म पर मिट्टी की परतें जमी थीं। पता नहीं, कितने दिनों से कपड़े बदलने का मौक़ा भी नहीं मिला था। सोते वक्त भी बड़ा बूट पाँवों में पहने रहना पड़ता था।

एक बात बहुत अच्छी थी। यहाँ के अफ़सर फ़ालतू की डिसिप्लिन, सैल्यूटिंग वग़ैरह के मामले में इतने चौकस नहीं थे। फिर भी कैप्टन भारद्वाज जैसे-तैसे वक्त निकाल लेता और आध घंटे का लेक्चर तो झाड़ ही देता। स्कीम में दो नये लेफ़्टिनेंट दाखिल हुए थे। कैप्टन भारद्वाज ने उन्हें बहुत रगड़ा। बेचारे परेशान थे। सहमे-सहमे घूमते रहते। ओ० आर० के साथ बड़े अदब से पेश आते। एक दिन कैप्टन भारद्वाज ने उन्हें

ने टेन्ट के बाहर 'अटेंशन' खड़ा कर रखा था। सुबह आठ बजे से लेकर
रह बजे तक धूप में एक ही जगह पर खड़े रहे थे बेचारे। डिकी को
न पर तरस आया। लेकिन, अब तक इन्सानियत से पेश आने वाले ये
नों यहाँ के हथकंडों में इतने माहिर हो गये थे कि कुछ ही दिनों में अपने
ातहतों पर अफ़सरी रोब झाड़ने लगे थे।

आख़िरी दिन था। टेन्ट लपेटे गये। कैम्प का नामोनिशान मिटा
दिया गया। अंडरग्राउन्ड सिग्नल सेंटर का गढ़ा भर दिया गया। जमीन पर
घास बिखेरकर जगह को सामान्य बना दिया गया, ताकि कोई पहचान न
पाये कि यहाँ सिग्नल सेंटर बनाया गया था। काग़ज और सिगरेटों के
टुकड़े तक साफ़ कर दिये गये। सफ़ाई का काम कैप्टन भारद्वाज की निग-
रानी में पूरा हुआ। भारद्वाज ने मौक़े का फ़ायदा उठाकर एक लेक्चर
झाड़ ही दिया। बताया कि युद्ध के दौरान सीक्रेसी की क्या अहमियत होती
है और यह कि किन-किन चीजों का ख़याल रखना पड़ता है। तीन टनवाली
ट्रकों में सामान भर दिया गया। डिकी यूँही घूमता हुआ अफ़सरों के टेन्टों
की तरफ़ आ निकला। जिस जगह कैप्टन भारद्वाज का टेन्ट गड़ा था,
उसके क़रीब वाले खेत की मुंडेर के सहारे बियर की बोतलों का तीन-
चार फ़ुट ऊँचा ढेर धूप में चमक रहा था।

पूरी दोपहर, और तमाम रात सभी गाड़ियाँ दौड़ती रहीं। सुबह जब
उसने बाथरूम में अपने कपड़े उतारे तो शर्ट और पैन्ट बेकार हो चुके थे।
उसने नल के नीचे सिर कर दिया। मोरियों से गन्दा लाल पानी बह रहा था।
डेढ़ महीने से शरीर पर जमी मिट्टी और पसीना धोने के लिए सभी जवान
ठंडे पानी की धार के नीचे जा बैठे थे। दो दिन की छुट्टी थी। कैप्टन
भारद्वाज मेस में बैठा ब्रॉन्डी पी रहा होगा, क्योंकि उसकी 'स्कीम' काम-
याब हुई थी और वह अब मेजर भारद्वाज बन चुका था। डिकी कमर पर
से मैल की परतें खुरचने की कोशिश कर रहा था।

पांच

सिख इनफैंट्री रेजिमेंट में टेंपरेरी ड्यूटी पर आये डिकी को दो महीने हो चुके थे। यहां के माहौल से डिकी खुश था। यूनिट के अफ़सर और ओ० आर० कई साल से इसी यूनिट में काम कर रहे थे। इसलिए पूरी रेजिमेंट का माहौल भाईचारे का-सा था। रेजिमेंट-कमांडर कर्नल फिलिप्स के साथ डिकी की पहली मुलाक़ात बड़ी दिलचस्प थी।

डिकी अपनी वनटनर स्टेशन-वैगन में ट्रांसमीटर पर बैठा था। यह वैगन खास मोबाईल कम्युनिकेशन के लिए बनायी गयी थी। तीन घंटे से वह कंट्रोल-स्टेशन से संपर्क स्थापित करने की कोशिश कर रहा था। कल से उसकी कोशिश चल रही थी, लेकिन अब तक कॉन्टेक्ट नहीं हो सका था। आसमान बादलों से ढंका हुआ था। सुबह से डायल घुमा-घुमाकर कंट्रोल-स्टेशन के सिग्नल पकड़ने की उसकी कोशिश नाकाम रही थी। मोर्स-की पर कंट्रोल के संदेश के संकेत भेजते रहने की कोशिशों से वह अब थक गया था। कान पर लगे हेडफोन की आवाज़ों से उसके कान सुन्न हो गये थे। इस परेशानी में वह सुबह का नाश्ता भी नहीं कर पाया था। अब तो वक़्त निकल चुका था। बार-बार कॉल करने से उसके हाथ दर्द कर रहे थे। किसी भी वक़्त कंट्रोल-स्टेशन से, ड्यूटी सिग्नल अफसर की जवाब-तलबी की कॉल आ सकती थी। वह ऊब गया। उसने सेट ऑफ़ कर दिया। हेडफ़ोन उतारकर रख दिया और हैवरसैक से मूंगफलियां निकालकर खाने लगा। पीछे की तरफ कुछ आहट हुई। हाफ-पैंट से बाहर निकली

मज़बूत जांघें और गठी हुई पिंडलियाँ दिखायी दीं। एक आवाज़ आयी, "क्यों उस्ताद, कंट्रोल से संपर्क हो गया क्या ?"

"नहीं यार...साला न जाने कहाँ मर गया ! कल से दिमाग़ ख़राब कर रहा हूँ। आओ, मूँगफली खाओ।...आज ब्रेकफ़ास्ट तो...।"

डिकी को लगा कुछ ग़लती हो रही है। उसने पीछे मुड़कर देखा। हाफ़-पैंट में शर्ट अंदर किये लाल चेहरे वाला कर्नल फ़िलिप्स खड़ा था। बड़ी शांति से वह डिकी की तरफ़ देख रहा था। डिकी हड़बड़ाकर उठ खड़ा हुआ। उसका सिर गाड़ी की छत से टकराया। सिर पर हथेली रखकर वह धम से नीचे बैठ गया। "सॉरी सर, मैं समझा...।"

कर्नल फ़िलिप्स ने उसे रोका।

"दैट्स ओ० के०, कोशिश जारी रखो। संपर्क होते ही मुझे ख़बर करो। और अर्दली से कहकर नाश्ता यहीं मँगा लिया करो। कल से मैं मेस-कंमाडर से बात कर लूंगा।"

उसके बाद डिकी ने कर्नल फ़िलिप्स को कई बार ग्राउंड पर देखा था। ग्राउंड के एक छोर से दूसरे छोर तक राइफ़ल लेकर क्रासिंग करते हुए कर्नल फ़िलिप्स को सब जवानों के आगे पाया था। कर्नल फ़िलिप्स सच्चा अफ़सर था। वास्तव में वह लीडर पहले और अफ़सर बाद में था। बाक़ी लोग सिर्फ़ अफ़सर थे।

उसकी नज़रों में सब जवान समान थे। एक ही की तरह दूसरा। सबके साथ उसका बर्ताव एक-जैसा था। फ़िलिप्स हर जवान को इंसान समझकर उससे पेश आता था। डिकी को शेखू की याद आयी। जब भी अफ़सरों के बारे में चर्चा होती, शेखू चिढ़ जाता था। वह कहता :

"अँग्रेज़ों के ज़माने में यह सब ठीक था। सभी अफ़सर हुक्म चलाने वाले होते थे, क्योंकि वे हाकिम देश के नुमाइंदे थे। सारे जवान ग़ुलाम मुल्क के नुमाइंदे थे। अफ़सर अँग्रेज़ थे, और जवान हिंदुस्तानी। इस बुनियाद पर आपसी बर्ताव तय किये जाते थे। इसलिए उनका रोब जमाना ठीक था। हुकूमत करने वाले चाहते भी यही थे। आज़ादी के बाद यह दीवार टूटनी चाहिए थी, तोड़ी जानी चाहिए थी। बदक़िस्मती से हमारे ज़्यादातर अफ़सर इस बात को समझ नहीं पाते। इस तरह का आवश्यक परिवर्तन

जाने के लिए कोई तैयार नहीं। आज भी वे लोग ब्रिटिश अफ़सरों की तरह घमंड में रहते हैं।"

शेखू का कहना कुछ हद तक सही था, पर फ़िलिप्स जैसे व्यक्ति इसके अपवाद हैं। अपने आचरण से ये लोग जाने-अनजाने इस दीवार को तोड़ने की कशमकश करते रहते हैं। लेकिन यह दीवार इतनी मज़बूत है कि इनके प्रयास अधूरे साबित होते हैं, निरर्थक रह जाते हैं। कर्नल फ़िलिप्स के लिए जवानों के मन में बहुत इज़्ज़त थी, प्यार था।

कुछ दिन बाद लान्स-नायक शेखू इसी सिग्नल रेजिमेंट में आया। शेखू और डिकी गहरे दोस्त बन गये थे। शेखू ख़ासा-अच्छा हॉकी प्लेयर था।

गर्मियों के दिनों में, पूरे दिन लू चलती रहती। सिग्नल सेंटर में, मोटे खुरे रंग के कपड़े पहनकर काम करना नामुमकिन था। रात के दो-ढाई बजे तक गरम लू चलती ही रहती थी। तिस पर मच्छरदानी लगाना क़ानूनन ज़रूरी था। डिकी को मच्छरदानी के अंदर घुटन होती थी। वह 'रोल-कॉल' से पहले मच्छरदानी तान देता। और रात में सोते समय लाइट ऑफ़ होते ही सिर बाहर निकालकर सो जाता। इतनी तेज़ गर्मी में मच्छरों की नस्ल पनप ही नहीं सकती थी। 'मलेरिया प्रिकॉशन' न हुआ, एक अग्नि-परीक्षा हो गयी! सूरज डूबने के बाद नंगे बदन रहना सख़्त मना था। पैरों में मोज़े, पूरी आस्तीन की कमीज़, गले तक बटन बंद, सिर पर टोपी, सिर्फ़ हाथों के बटन खुले हुए, बस। यह क़ानून था। इसे तोड़ना, या इसके सही होने पर शक ज़ाहिर करना भी गुनाह था। सूबेदार साहब कभी-कभार 'रोल-कॉल' के वक़्त अचानक आ जाते थे। तब पाँयचे उठाकर मोज़े दिखाने पड़ते थे। अगर किसी के मोज़े न हों और उसने आधी आस्तीन की कमीज़ पहन रखी हो तो अगले दिन सुबह उसे दफ़्तर में हाज़िर होना पड़ता था। इसके बावजूद रात में लाइट-ऑफ़ के बाद जब, कंपनी-हवलदार का राउंड ख़त्म हो जाता तो डिकी और शेखू बैरक के पास की हॉकी-ग्राउंड पर अपनी खाटें बिछा लेते और वहीं सो जाते।

शेखू जब भी बात करने लगता, डिकी को बलबीरसिंह याद आता।

"लड़ाई में शहीद होने का शौक़ मुझे नहीं है।" बिस्तर पर लेटे-लेटे शेखू बोलने लगता। बोलते-बोलते वह उठ बैठता। सरदार होने के बावजूद

वह दाढ़ी मुंडवाता था और वाल भी कटवाता था। "मेरा जन्म, विलकुल स्वाभाविक है। माँ की कोख में मैंने पूरे दिन काटे हैं। इसलिए मुझे मृत्यु भी उतनी ही स्वाभाविक चाहिए। बुढ़ापा काटकर ही मैं मरूँगा। जंग के मैदान से भाग आने में मुझे कोई शर्म महसूस नहीं होगी। मुझे कभी नहीं लगेगा कि मैंने अपनी आत्मा को धोखा दिया है।"

"आख़िर हम फ़ौजी, क्यों ज़िंदा रहते हैं? किसलिए लड़ते हैं? किसलिए मरते हैं? जब उनका वजूद ख़तरे में पड़ जायेगा तब हमारी याद की जायेगी। फ़ौज जब सरहदों पर होगी, रेडियो पर जवानों क स्तुतियाँ गायी जायेंगी। अख़बारों में वीर-रस की कविताएँ निकलेंगी उन कीड़ों के लिए हम अपनी ज़िंदगी तो बरबाद कर ही रहे हैं। उन्हीं के लिए अपनी जान क्यों गवायें? नहीं डिकी, नहीं, यह मुझे नहीं। तुम समझते नहीं हो। ये लोग अपनी सभ्य दुनिया को बचाये के लिए हमें मशीन बना देते हैं। अपनी इंसानियत को सुरक्षित रखने लिए हमारी इंसानियत का गला घोंट देते हैं। हमें पशु बना देते हैं। यू आ नॉट टु क्वेश्चन व्हाई! हम मानो चंगेज़ख़ाँ की संतान हैं, कि सामने आ वाले हर आदमी के पेट में संगीन भोंककर आँतें बाहर निकाल लें और उ आँतों में 'वीर चक्र' पिरोकर गले में लटका लें और अपने को धन्य अनु करें। नहीं डिकी, नहीं मैं इंसानों के लिए मरने को तैयार हूँ, पर के लिए नहीं।"

यह सब सुनकर डिकी परेशान हो जाता था। रुटीन में पूरे और डिसिप्लिन से रहने वाला, टर्न-आउट, किट ले-आउट, सैल्यूटिंग आ में पूरी सावधानी बरतने वाला शेखू और इस तरह की बातें करने शेखू—इन दोनों के बीच ताल-मेल बिठाना बहुत मुश्किल था।

खड़े-खड़े वह ऊब गया था। कभी ऊपर की तरफ़ देखता तो क ज़मीन की तरफ़। सामने सी० एच० एम० 'डेली ऑर्डर' पढ़कर सुना था। कंपनी-हवलदार के इस फ़तवे को सुनना एक बोरियत थी। उस फ़तवे में एरिया कमांडर के आने की सूचना थी। आज से चौदह बाद सब-एरिया कमांडर यूनिट को भेंट देने वाला था। ऑर्डर पढ़ के बाद सी० एच० एम० ने उस पर अपना भाषण शुरू किया—

"सब-एरिया कमांडर साहब के इन्स्पेक्शन के दिन स्पेशल परेड होगी। सब जवान, चाहे वे सिग्नल सेंटर शिफ्ट में हों या और किसी ड्यूटी में हों, चाहे नाइट ड्यूटी, चाहे ऑफ़ ड्यूटी, हरेक जवान परेड में हाजिर होगा। आज से ही ड्रिल-प्रैक्टिस शुरू होगी। हरेक जवान रोज सुबह, और दोपहर को परेड-ग्राउंड पर हाजिर रहेगा। किसी भी जवान को इसमें छुट्टी नहीं, समझे? कोई डाउट? आगे, सब-एरिया कमांडर साहब के दौरे के दिन 'किट ले-आउट' होगा। हर जवान 'किट ले-आउट' करेगा। किसी को अगर कोई आइटम इश्यू नहीं है, तो आज ही क्वार्टर-मास्टर से ले ले। आगे, बैरक की सफ़ाई...ऑफ़ शिफ्ट के जवान, ऑफ़ टाइम में बैरक की सफ़ाई करेंगे। बैरक अंदर से, बाहर से, यूनिट के इर्द-गिर्द, दायें-बायें सब चमाचम मांगता हूं। कल से गेम परेड बंद। सिर्फ़ कटिंग चलेगी, सिर्फ़ सफ़ाई।"

डिकी सोच में डूब गया। 'स्पेशल ड्रिल', यानी रोज सुबह-शाम 'दायां, बायां...दायां-बायां', रात में सिग्नल सेंटर शिफ्ट, और ऑफ़ टाइम में यह सफ़ाई और यह 'किट ले-आउट' सिपाहियों में बांटी गयी चीज़ों की नुमाईश लगाओ। पेंट, शर्ट, मोजे, मच्छरदानी, कंबल, दरी, बूट, डोरी, सोपकेस और जाने क्या-क्या! कपड़ों को खास तरीक़े से तह करो, जूतों को पॉलिश करो, बेल्ट के बटन चमकाओ और फिर सब पर आर्मी नंबर लगाओ। और यह झमेला महीने में कम-से-कम एक बार तो करना ही पड़ता है। इसलिए दरी से लेकर मच्छरदानी तक सभी चीज़ों का अलग एक सेट तैयार रखना पड़ता है। इस पचड़े का क्या मतलब था, यह कभी उसकी समझ में नहीं आया था।

डिकी अगले दिन सुबह सिग्नल सेंटर जाने की तैयारी में था कि नायक जोशी बैरक में आया। "अरे, भाई कोई खून देने के लिए तैयार है? सख़्त ज़रूरत है।" पहले तो डिकी ने उसकी तरफ़ ध्यान नहीं दिया। आजकल सैकड़ों सिविलियन रक्तदान करके देश-सेवा का पुण्य बटोर रहे हैं। आज-

कल दस-बीस रुपयों के लिए खून बेचने वालों की कमी नहीं है। कुछ के इस आरोप से कि मिलिटरी अस्पतालों में रक्त का काला बाज़ार है, डिकी ख़ुद इन्कार नहीं कर सकता था। उसे यकायक एरिया-कमांड की विज़िट की याद आयी। वह फ़ौरन नायक जोशी की तरफ लपका "ओ उस्ताद, अपना 'ओ' ग्रुप है, चलेगा क्या ?"

क़रीब दस बजे वह एम० एच० में हाज़िर हुआ था। खून देते वह सूबेदार साहब के साथ गपशप करता रहा। सूबेदार काफ़ी ग था। रिटायर होने के क़रीब आ चुका था। पिछले तीस साल मेडिकल कोर में सर्विस कर रहा था। पेंशन के बाद उसे इस उम्र में नौकरी देने वाला था? और वह दूसरा काम कर भी क्या सकता था इतनी-सी पेंशन में बच्चों की पढ़ाई भी नहीं हो सकती थी। इसकी फ़िक्र उसे थी। दो-चार साल और एक्सटेंशन मिल जाये तो भी ठीक वरना परेशानी-ही-परेशानी।

डिकी मेज़ पर लेटा-लेटा सुनने का काम कर रहा था। दोनों की खूब जमीं। सूबेदार ने मेज़ के नीचे लगी बोतल की तरफ़ देखा। आ भर चुकी थी। उसने डिकी से उठ जाने के लिए कहा। इसके बाद ि को तीन दिन के लिऐ 'सी' कैटीगरी और सात दिन के लिए 'बी' कैट मिली थी। मतलब तीन दिन का बेड-रेस्ट और सात दिन की लाइट इसके अलावा सूबेदार ने वादा किया था कि अगर उसे दस दिन के भी थकावट महसूस हुई तो वह उसे और सात के लिए 'बी' देगा। मूड में था, इसी बीच एक जवान नर्स बरामदे से निकलकर एड़ियों से खट की आवाज़ करती हुई दरवाज़े से बाहर चली गयी।

डिकी की नज़रें उसका पीछा कर रही थीं। बात सूबेदार साह ध्यान में आ गयी।

"तुम्हारी ही गाँव वाली है। बड़ी काम की छोकरी है। बम्बई न ! क्या नाम है, भला-सा, प्रभा या कुछ ऐसा ही...।"

सूबेदार को सलामी ठोंककर डिकी जल्दी-जल्दी ऊपर आया। एक वॉर्ड से निकलकर दूसरे वॉर्ड की तरफ़ जा रही थी। डिकी ने बढ़ाकर उसे पकड़ने की कोशिश की। प्रभा के वॉर्ड में दाख़िल होने के

ही डिग्री उसका 'कमोडक्षण' ले सका था। प्रभा ने भी उसे छिड़कती नजरों से देख लिया था। प्रभा का शरीर बड़ा सुडौल था। डिकी चलता रहा, और यूनिट की तरफ़ निकल गया।

नर्सों पर लाइन मारना अपने बस का रोग नहीं। माने कई अफ़सर यही धंधा करते रहते हैं। ओ० आर० की कौन चिन्ता करता है? लेकिन यह सब करने के लिए वक्त किसके पास है? डे-शिफ़्ट और नाइट-शिफ़्ट करते-करते यहीं परेशान हैं। हमसे यह रोग पाला नहीं जायेगा। लेकिन चीज़ वैसे बुरी नहीं है।

तीन दिन तक सभी ड्यूटियों से उसे छुटकारा मिल गया था। दोपहर का वक्त था। उसे कोई काम नहीं था। बाक़ी जवान बैरक की सफ़ाई करने में लगे थे। उसने सिगनल सेंटर के सुपरिटेंडेंट से वादा किया था कि वह नाइट-शिफ़्ट में हाज़िर होगा। उसकी शिफ़्ट में, वैसे भी ऑपरेटरों की कमी ही थी। उसने सिविल ड्रेस पहनी। पीछे की तरफ़ से कम्पाउंड पार करके बाहर निकलने के लिए आउट-पास लेने का नियम था। गेट पर मिलिटरी-पुलिस शिकार की घात में लगी रहती। बिना 'आउट-पास' अगर कोई पकड़ा जाता तो सज़ा निश्चित थी। छुट्टी के तीन दिन पहले से ही 'आउट-पास' के लिए नाम दर्ज करवाने पड़ते थे। बाहर निकलने की वजह लिखनी पड़ती थी, तब 'आउट-पास' मिलता था। लौटने पर अंदर जाते समय 'आउट-पास' वापस करना पड़ता था। दाखिल होते ही क्वार्टर-गार्ड में रिपोर्ट करनी पड़ती थी। इसके अलावा बाहर जाते वक्त या तो पूरी मिलिटरी ड्रेस में या सफ़ेद पैन्ट, सफ़ेद शर्ट और काले रंग की गोल टोपी वाले विचित्र ड्रेस में चलना पड़ता था। डिकी के लिए दोनों शर्तें मुश्किल नहीं थीं। अब तक एक बार भी उसने 'आउट-पास' नहीं लिया था। पुलिस को चकमा देने की बड़ी अच्छी तरकीबें उसे मालूम थीं। निकलते वक्त बग़ल में एक-दो किताबें थाम लो, चाल में ज़रा फ़र्क़ पैदा कर दो। बस, आसानी से बाहर निकला जा सकता था।

वह बस-स्टैण्ड पर पहुँचा। शहर जाने वाली बस तैयार थी। पैसेंजर बैठ चुके थे। वह दौड़कर बस में चढ़ गया। एक नज़र पैसेंजरों पर डाली। सिगनल सेंटर और टेलिफ़ोन एक्सचेंज में काम करने वाली सिविलियन

लड़कियाँ शहर लौट रही थीं। सुरजित कौर को देखकर उसने 'विश' किया। अचानक उसकी नज़र प्रभा पर पड़ी। वह कुछ आगे, दायीं तरफ़ वाली सीट पर बैठी थी।

इस बार वह साड़ी में थी। और बिल्कुल वैसे ही रंग का ब्लाउज़। पीठ पर दो चोटियाँ झूल रही थीं। मुँह से अनचाहे 'वुल्फ़ ह्विसल' निकल गयी। तिरछी नज़रों से प्रभा ने पीछे की तरफ़ देखा, और बग़ल वाले युवक से बातें करने लगी। युवक शायद पंजाबी था। कोई अफ़सर होगा। उन दोनों की बातें हिन्दी में चल रही थीं। बस के हिचकोलों में उनके कंधे आपस में टकरा रहे थे। युवक किसी बहाने उसे हँसाने की कोशिश कर रहा था। डिकी आगे बढ़ा और सीट के क़रीब आकर नीचे झुका। पंजाबी इलाक़े में एक मराठी लड़की का पाया जाना, बस यही ब. प्रभा से जान-पहचान करने के लिए काफ़ी थी। पंजाबी युवक बात करता जा रहा था। उसके कंधे पर उँगली से टैप करके डिकी ने कहा, "एक्स क्यूज़ मी," और फिर प्रभा की तरफ़ मुख़ातिब हुआ, "क्यों आप मह राष्ट्रियन तो नहीं ?" जवाब मिलने के पहले ही वह कहने लगा, ' :हन के स्टाईल और मैचिंग से पहचाना जा सकता है कि आप पूना की हैं।' प्रभा का अब तक कुछ नाराज़ लगने वाला चेहरा एकदम खिल उठा।

"मैं पूना की नहीं, बम्बई की हूँ," उसने कहा।

"तब तो फिर जम गयी। हम दोनों एक ही जगह के हैं।"

बस फिर क्या था। कुछ ही देर में दोनों इस तरह गप्पें लड़ाने लगे ज बहुत पुराने साथी हों। दोनों भूल गये कि वे पंजाब में हैं और यह। उनकी बस जालंधर जा रही है। दोनों बम्बई की यादों में खो गये थे। ब शहर के क़रीब आ चुकी थी। प्रभा ने डिकी से पंजाबी युवक की प करवायी। "आप हैं कैप्टन ओमप्रकाश शर्मा। आर्मी मेडिकल कोर डॉक्टर हैं। और आप हैं डिकी, मेरे शहर के रहने वाले। टे. ऑपरेटर।" डिकी ने प्रभा को बताया था कि वह सिग्नल कोर में सिग्न मैन है। लेकिन पहचान कराते वक़्त प्रभा ने इस बात को बड़ी स... टाल दिया था। डिकी कुछ क्षण सोच में पड़ा रहा। फिर उसने कहा, "- ऐम इन सिग्नल कोर, सर, सिग्नलमैन डिकी।" और उससे हाथ म.

के लिए अपना हाथ आगे बढ़ाया। कैप्टन शर्मा कुछ क्षण हिचकिचाया। एक सिविलियन टेलीफ़ोन ऑपरेटर से हाथ मिलाना तो ठीक है, पर एक ओ० आर० से ! आख़िरकार उसने अपना हाथ बढ़ाया। डिकी ने प्रभा की तरफ़ देखा। वह कुछ नाराज़ नज़र आ रही थी। "वेल, आई ऐम प्राउड ऑफ़ बीइंग ए सोल्जर !" उसने उसकी तरफ़ देखकर कहा। वह खिड़की के बाहर देखने लगी, "मुझे यहीं उतरना है। ओ० के०, सर, बाई !" वह एक झटके के साथ बाहर निकला। कैप्टन शर्मा के चेहरे पर तसल्ली झलक रही थी। डिकी ने देखा, दैट बास्टर्ड इज़ रिलीव्ड...!

वह लस्सी-हाउस में दाख़िल हुआ। ठंडी लस्सी पेट में उतरी। उसका दिमाग़ ज़रा शांत हुआ। वह बाहर आया और पास के सिनेमाघर में फ़िल्म देखने चला गया। सीढ़ियाँ पार करके वह बालकनी में दाख़िल हुआ। उसने देखा, उसकी पीछे की लाइन में कैप्टन शर्मा और प्रभा बैठे हुए हैं। उसने अपनी गर्दन नीचे झुका ली। टिकट का नंबर और सीट मिलाने के बहाने वह उनके पास तक पहुँच गया। उसे देखकर वे आश्चर्य-चकित थे। "सो वी मीट अगेन ! हैलो सर !" बग़ल वाली कुर्सी पर बैठते हुए उसने कैप्टन शर्मा को 'विश' किया। कैप्टन मुसकराया, लेकिन उसकी आँखें मानो जल रही थीं, 'टू हेल यू गो !' शर्मा ने उसकी तरफ़ देखा। उसके चेहरे पर हलकी मुसकराहट थी। डिकी ने उधर बिलकुल ध्यान नहीं दिया। वैसे डिकी बिलकुल शांत था। उसने अपनी टाँगें सामने वाली कुर्सी की पीठ पर टिका दी और पीछे की तरफ़ झुककर आराम से बैठ गया। कुछ देर तक उसकी नज़रें छत पर, बत्तियों पर, स्क्रीन पर और फिर दर्शकों पर घूमती रहीं। उसने जब गरदन घुमायी तो देखा कि प्रभा उसे देख रही है। एक क्षण के लिए उसकी नज़रें झुकीं, फिर आपस में मिलीं। डिकी की नज़रें आहिस्ता-आहिस्ता उसके होंठो, बालों और गालों पर से फिसलती हुई कंधों पर, और कधों में फिसलकर छाती पर होती हुई, हथेलियों पर जा टिकीं। एक बार और उसने उसके चेहरे की तरफ़ देखा। होंठ भींचकर उसने लंबी साँस ली और गर्दन झटककर सामने स्क्रीन की तरफ़ देखने लगा। बत्तियाँ बुझ चुकी थीं। फ़िल्म शुरू हुई। बीच-बीच में उसके हाथों का स्पर्श डिकी महसूस करता। उसने देखा, कैप्टन शर्मा का

हाथ प्रभा की पीठ तक बढ़ आया था। लेकिन उसके बाद उसका ध्यान उनकी तरफ़ बिलकुल नहीं था।

प्रभा के लिए यह ज़िंदगी शायद बड़ी उकता देनेवाली होगी। नाइट-शिफ़्ट, डे-शिफ़्ट, निरंतर कराहते हुए मरीज़, चीख़-पुकार, रोना-धोना, और ऊपर से ये मिलिटरी डॉक्टर। मौत के वीभत्स रूप से निरंतर साक्षात्कार!

वैसे देखा जाये तो, डिकी के मन में प्रभा के प्रति कोई ख़ास आकर्षण नहीं था। और न ही शर्मा को लेकर कोई द्वेष था। लेट देम एंज्वॉय। हमें तो यहाँ के बाद अपने वार्ड हैं ही। स्क्रीन पर साधना के क्लोज़-अप देखने में वह मग्न था। इंटरवल में कैप्टन शर्मा हॉल के बाहर जा चुका था। इधर प्रभा एकाध बार डिकी की तरफ़ झुकी, लेकिन डिकी स्क्रीन की तरफ़ देखता रहा। फिर एकाएक वह कहने लगी, "मेरा मंशा वह नहीं था। तुम बेकार में गुस्सा हुए।" उसके मुँह से 'तुम' सुनकर डिकी को अच्छा लगा। उसकी तरफ़ मुड़कर वह हँसा, "फ़ॅरगेट इट, ओ० के०। बंबई कब जाने का इरादा है?" शर्मा लौट आया था। दोनों बातों में व्यस्त थे।

वे दस दिन बड़े मज़े में कटे। उन दिनों सिग्नल सेंटर के काम अलावा और कोई काम नहीं था। इसलिए आठ-दस दिन की अवधि में वह तीन वार एम० एच० गया था, प्रभा से मिला था। उनकी मुलाक़ातें वार्ड में ही होतीं। वह वार्ड के बाहर खड़ा रहता। वह कुछ देर के लिए बाहर आती। कैन्टीन में कॉफ़ी पीते-पीते गप्पें चलतीं। मौक़ा पाकर वह उसके सौंदर्य की तारीफ़ करता रहता। दोनों के संबंध अब काफ़ी सहज और फ़्री हो चुके थे। लेकिन डिकी ने कभी उन संबंधों को गहरा बनाने की कोशिश नहीं की थी। उसने कभी उससे उसकी 'छुट्टी' का प्रोग्राम नहीं पूछा था। हाँ, अतीत को लेकर दोनों खुलकर बातें करते, लेकिन वर्तमान के बारे में चुप्पी साधे रहते। कभी वह उसे अपनी नौकरी के अनुभव बताती, लेकिन इसमें डिकी को कोई ख़ास दिलचस्पी नहीं थी। शहर में घूमते वक़्त एक

बार उसने दूर से देखा था कि प्रभा कैप्टन शर्मा के साथ जा रही थी। उनसे कतरा जाने के लिए रास्ता बदलकर वह गली में घुसा था। शहर में मिलते रहने का प्रभा ने उसे कई बार संकेत दिया था। लेकिन डिकी ने बात टाल दी थी। हाँ, उसके होस्टल कभी-कभार वह चला जाता। अब उनके संबंध काफ़ी सहज हो चुके थे, इसलिए दोनों के बीच अब खुलकर बातें होतीं। अब वह शुरू वाला संकोच नहीं रह गया था। एक दिन प्रभा ने कहा था, "डिकी, तुमसे बातें करना मुझे बड़ा अच्छा लगता है। दिमाग़ पर कोई बोझ नहीं होता। हम क्या बोल रहे हैं, उसका क्या मतलब निकाला जायेगा, यह फ़िक्र नहीं होती।"

उसने जवाब दिया था, "इन बातों को लेकर 'विश्लेषण' की कोशिश न करो, प्रभा। हम जहाँ तक पहुँचे हैं, वहीं तक ठीक है। कभी लगता है... सो डैम इट। प्रेम के तौर-तरीक़ों का मैं जानकार नहीं हूँ। मेरे लिए यह संभव भी नहीं है। जिनके पास ख़ाली वक़्त बहुत है उनके लिए शायद यह संभव है। पीपुल लाइक मी कैन नॉट एफ़ोर्ड इट[1]।"

उसने डिकी की हथेली थपथपाते हुए जवाब दिया था, "यू डोन्ट नीड इट, डिकी।" वह उससे मिलने के लिए बड़ा बेचैन रहता हो, ऐसी बात नहीं थी। लेकिन काफ़ी दिनों तक भेंट न होती तो कुछ अजीब-सा ज़रूर लगता था। मुलाक़ात न होने पर प्रभा फ़ोन पर उससे बातचीत करती रहती।

1. मेरे जैसे व्यक्ति इसे वहन नहीं कर सकते।

छः

"डिकी, तुम्हारा फ़ोन है।" उसके ऑपरेटर साथी मणि ने कहा।

डिकी ने पेंडिंग मैसेजों की गड्डी देखी। इसे पहले क्लियर कर डालें, वरना रात में और बोझ पड़ेगा।

"किसका फ़ोन है? होगा पठानकोट से बलवीर का। कहो, मैं रात में उसे रिंग कर दूंगा।"

"बलवीर का फ़ोन नहीं, यार, किसी लड़की की आवाज़ है।"

डिकी ऑपरेटर से रुकने के लिए कहकर उठा। प्रभा का ही फ़ोन होगा। काफ़ी दिन से उनकी मुलाक़ात नहीं हुई थी। पिछले कुछ हफ़्तों से सरहद पर कुछ सरगर्मियाँ शुरू हो गयी थीं। छुट्टी पर गये हुए जवानों को तार देकर बुला लिया गया था। रेजिमेंट के कुछ ऑपरेटर यूनिटों में टेंपरेरी ड्यूटी पर भेज दिये गये थे। सिग्नल सेंटर रात-दिन काम कर रहा था। प्रधानमंत्री और रक्षामंत्री के साधारण वक्तव्यों को भी बहुत पब्लिसिटी दी जा रही थी। इन वक्तव्यों के विशेष अर्थ लगाये जा रहे थे। शायद प्रतिपक्षी मुल्क युद्ध की तैयारियाँ कर रहा था। परस्पर आरोपों-प्रत्यारोपों की भरमार थी। युद्ध-गीतों, वीर-रस के गीतों और जोशीले गीतों की मानो बाढ़ आ गयी थी। लेकिन सामान्य जवान इसमें कोई ख़ास दिलचस्पी नहीं दिखा रहा था। उसके पास वक़्त भी नहीं था। रेल की कैन्टीनों में मिलने वाली मुफ़्त चाय उसके लिए इन गीतों के मुक़ाबले ज़्यादा स्फूर्तिदायक थी। इस शोर-शराबे के कारण पिछले पाँच-

"ज़रूर आना। मैं इंतज़ार करूँगी। फ़ोन रखती हूँ। जल्दी में हूँ। अभी तैयारी करनी है। क्लिअरेन्स, रेलवे वारंट, वग़ैरह-वग़ैरह।"

फ़ोन कट चुका था। कुछ क्षण तक डिकी चोंगे की तरफ़ देखता रहा। उसे पता था कि प्रभा से मिलने जाना बहुत मुश्किल है, लगभग असंभव। उसके यूनिट के चारों ओर कड़ा पहरा था। मिलिटरी पुलिस की संख्या बढ़ा दी गयी थी। बड़ा कड़ा बंदोबस्त था। बिना आउट-पास के कंपाउंड के बाहर जाना मुमकिन नहीं था। उधर सरहद पर छोटी-मोटी वारदातें हो रही थीं। "ओह डैम देम! दोज़ ब्रास्टर्ड्स, दोज़ पिग्स!"

डिकी को शेखू याद आया। शेखू ने कहा था: 'हाँ, हाँ...और, मरने के बाद कभी वीर-चक्र भी देते हैं। मेरा भी यही कहना है, डिकी, ये लोग हमारी मौत का सम्मान करते हैं। लेकिन हम जीते कैसे हैं, इसे कोई नहीं देखता। अपने भीतर के इंसान को दफ़नाकर, हम किस तरह हैवानों की ज़िंदगी बसर करते हैं—इस पर शायद ही कोई अपनी क़लम चलाता है। युद्धस्थ कथा रम्या! ओ शिट! कथाएँ सभी दिलचस्प होती हैं, डिकी। पीड़ाओं की, दुर्भाग्य की, और दुखों की कहानियाँ भी बड़ी दिलचस्प होती हैं, क्योंकि वे कहानियाँ होती हैं, अनुभव नहीं होता। इन लोगों ने जवानों की मौत को ग्लोरीफ़ाई किया है। हमारी मौत पर ख़ूब मर्सिये लिखे हैं। इन्होंने गद्‌गद होकर लिखा है, चीख़-चीख़कर लिखा है। ठीक भी तो है। वे हमें जिलाना चाहते हैं। वी आर ट्रेन्ड टू किल ऑर गेट किल्ड![1] इन कथाकारों में हिम्मत है तो लिखें हमारी ज़िंदगी पर। क्षण-क्षण मरती चली जाने वाली इस ज़िंदगी पर।

गड्डी में से एक-एक मैसेज डिकी भेज रहा था। उसकी उँगलियाँ 'मोर्स-की' पर चल रही थीं। रात के दो बजे होंगे। भयंकर सर्दी थी। उसके अग़ल-बग़ल चार-पांच ऑपरेटर हेडफ़ोन लगाये काम में व्यस्त थे। सर्दी की

---

1. हमें सिखाया ही जाता है—मार देना या मर जाना।

वजह से सबकी उँगलियाँ ठिठुर गयी थीं। इसलिए उसने उधर वाले ऑपरेटर को रुकने के लिए कहा और कोने में रखे हुए हीटर पर हाथ सेंके। फिर वह टेलिप्रिंटर रूम से ओवरकोट लाने के लिए उठा। उस वक़्त टेलिप्रिंटर पर दो-तीन सौ शब्दों का एक संदेश 'इमर्जेन्सी मैसेज' आ रहा था। बाप रे, अब इसे सारे पास करना होगा। आज की रात, आफ़त की रात है! कमरे की तरफ़ जाते वक़्त उसने दूसरे टेलिप्रिंटर पर देखा। उधर वाला ऑपरेटर मैसेज शुरू करने से पहले उँगलियों को गरमाने के लिए यूँ ही कुछ टाइप कर रहा था। इस स्थिति में कभी बड़े मज़ेदार जुमले पढ़ने को मिल जाते हैं। लेकिन वहाँ हमेशा की तरह एक ही वाक्य बार-बार आ रहा था: 'नाऊ इज़ द टाइम फ़ॉर ऑल द कॉमरेड्स टु कम टु द एड ऑफ़ द पार्टी।'[1] यह भी वैसा ही 'एक सवाल' था जिसका जवाब वह कभी न दे सका था। क़रीब-क़रीब हर टी० पी० ऑपरेटर काम शुरू करने से पहले इसी वाक्य को तीन-चार बार टाइप करता रहता है। ट्रेनिंग-पीरियड में आदत पड़ जाती थी शायद। लेकिन इस जुमले का निर्माण कहाँ और कब हुआ था, यह बताना मुश्किल है।

उँगलियों में गर्मी पैदा करके वह अपने कमरे में लौट आया। माहौल में तनाव था। कल से सरहद पर बंदूकों की आवाज़ें सुनायी दे रही थीं—कड़ाक...कट, कट...कट! टेलिप्रिंटर पर संदेश आ रहे थे, आ रहे थे दिल्ली! अंबाला! जिनवा! वायरलेस ऑपरेटर चीख रहा था: "हलो, ब्रेवो,...टू...टू...ब्रेवो! फ़ाइव ब्रेवो! टू...टू...ब्रेवो,...फ़ाइव।" 'ड्यूटी सिग्नल्स' ट्रंककॉल पर गला फाड़-फाड़कर चीख रहा था। पूरी मिलिटरी-मशीनरी पूरे ज़ोर-शोर से काम कर रही थी। खिड़की से मोटर-साइकिलों को 'किक' लगाने की आवाज़ें आ रही थीं। मेन गेट पर संतरी ओवरकोट की जेब में हाथ ठूँसे खड़ा था। 'स्ट्रीट लाइट' की रोशनी उसके सिर पर पड़ रही थी। पीछे स्टोर के पास खड़े दो संतरियों की छायाएँ हिल रही थीं। 'मोर्स-की' पर उसका हाथ तेज़ी से चल रहा था। वर्षों से सधी हुई इन संदेशों का एक-एक शब्द ऑपरेटर के काग़ज़ पर उतारा जा रहा

---

1. अब सब कॉमरेडों का पार्टी ज्वाइन करने का समय हो गया है।

"ज़रूर आना। मैं इंतज़ार करूँगी। फ़ोन रखती हूँ। जल्दी में हूँ। अभी तैयारी करनी है। क्लिअरेन्स, रेलवे वारंट, वग़ैरह-वग़ैरह।"

फ़ोन कट चुका था। कुछ क्षण तक डिकी चोंगे की तरफ़ देखता रहा। उसे पता था कि प्रभा से मिलने जाना बहुत मुश्किल है, लगभग असंभव। उसके यूनिट के चारों ओर कड़ा पहरा था। मिलिटरी पुलिस की संख्या बढ़ा दी गयी थी। बड़ा कड़ा बंदोबस्त था। बिना आउट-पास के कंपाउंड के बाहर जाना मुमकिन नहीं था। उधर सरहद पर छोटी-मोटी वारदातें हो रही थीं। "ओह डैम देम ! दोज़ ब्रास्टर्ड्स, दोज़ पिग्स !"

डिकी को शेख़ू याद आया। शेख़ू ने कहा था: 'हाँ, हाँ...और, मरने के बाद कभी वीर-चक्र भी देते हैं। मेरा भी यही कहना है, डिकी, ये लोग हमारी मौत का सम्मान करते हैं। लेकिन हम जीते कैसे हैं, इसे कोई नहीं देखता। अपने भीतर के इंसान को दफ़नाकर, हम किस तरह हैवानों की ज़िंदगी बसर करते हैं—इस पर शायद ही कोई अपनी क़लम चलाता है। युद्धस्थ कथा रम्या ! ओ शिट ! कथाएँ सभी दिलचस्प होती हैं, डिकी। पीड़ाओं की, दुर्भाग्य की, और दुखों की कहानियाँ भी बड़ी दिलचस्प होती हैं, क्योंकि वे कहानियाँ होती हैं, अनुभव नहीं होता। इन लोगों ने जवानों की मौत को ग्लोरीफ़ाई किया है। हमारी मौत पर खूब मर्सिये लिखे हैं। इन्होंने गद्‌गद होकर लिखा है, चीख़-चीख़कर लिखा है। ठीक भी तो है। वे हमें जिलाना चाहते हैं। वी आर ट्रेन्ड टू किल ऑर गेट किल्ड ![1] इन कथाकारों में हिम्मत है तो लिखें हमारी ज़िंदगी पर। क्षण-क्षण मरती चली जाने वाली इस ज़िंदगी पर।

गड्डी में से एक-एक मैसेज डिकी भेज रहा था। उसकी उँगलियाँ 'मोर्स-की' पर चल रही थीं। रात के दो बजे होंगे। भयंकर सर्दी थी। उसके अग़ल-बग़ल चार-पाँच ऑपरेटर हेडफ़ोन लगाये काम में व्यस्त थे। सर्दी की

---

1. हमें सिखाया ही जाता है—मार देना या मर जाना।

वजह से सबकी उँगलियाँ ठिठुर गयी थीं। इसलिए उसने उधर वाले ऑपरेटर को रुकने के लिए कहा और कोने में रखे हुए हीटर पर हाथ सेंके। फिर वह टेलिप्रिंटर रूम में ग्रेटकोट लाने के लिए उठा। उस वक़्त टेलिप्रिंटर पर दो-तीन सौ शब्दों का एक लंबा 'इमर्जेन्सी मैसेज' आ रहा था। बाप रे, अब इसे आगे पास करना होगा। आज की रात, सल्न की रात है! कमरे की तरफ़ जाते वक़्त उसने दूसरे टेलिप्रिंटर पर देखा। उधर वाला ऑपरेटर मैसेज शुरू करने से पहले उँगलियों को गरमाने के लिए यूँ ही कुछ टाइप कर रहा था। इस स्थिति में कभी बड़े मज़ेदार जुमले पढ़ने को मिल जाते हैं। लेकिन वहाँ हमेशा की तरह एक ही वाक्य बार-बार आ रहा था : 'नाऊ इज़ द टाईम फ़ॉर ऑल द कॉमरेड्स टु कम टु द एन्ड ऑफ़ द पार्टी।'[1] यह भी वैसा ही 'एक सवाल' था जिसका जवाब वह कभी न दे सका था। क़रीब-क़रीब हर टी० पी० ऑपरेटर काम शुरू करने से पहले इसी वाक्य को तीन-चार बार टाइप करता रहता है। ट्रेनिंग-पीरियड में आदत पड़ जाती थी शायद। लेकिन इस जुमले का निर्माण कहाँ और कब हुआ था, यह बताना मुश्किल है।

उँगलियों में गर्मी पैदा करके वह अपने कमरे में लौट आया। माहौल में तनाव था। कल से सरहद पर बंदूकों की आवाज़ें सुनायी दे रही थीं—कड़ाड...कट, कट...कट! टेलिप्रिंटर पर संदेश आ रहे थे, जा रहे थे दिल्ली! अंबाला! शिमला! वायरलेस ऑपरेटर चीख़ रहा था : "हलो, ब्रेवो,...टू...टू...ब्रेवो! फ़ाइव ब्रेवो! टू...टू. ब्रेवो,...फ़ाइव।" 'ड्यूटी सिगनल' ट्रंककॉल पर गला फाड़-फाड़कर चीख़ रहा था। पूरी मिलिटरी-मशीनरी पूरे ज़ोर-शोर से काम कर रही थी। खिड़की से मोटर-साइकिलों को 'किक' लगाने की आवाज़ें आ रही थीं। मेन गेट पर संतरी ग्रेटकोट की जेब में हाथ ठूँसे खड़ा था। 'स्ट्रीट लाइट' की रोशनी उसके सिर पर पड़ रही थी। पीछे स्टोर के पास खड़े दो संतरियों की छायाएँ हिल रही थीं। 'मोर्स-की' पर उसका हाथ तेज़ी से चल रहा था। यहाँ से अस्सी मील दूर इन संदेशों का एक-एक शब्द ऑपरेटरों के काग़ज़ पर उतारा जा रहा

---

1. अब सब साथियों का पार्टी समाप्त करने का समय हो गया है।

था। उधर वर्फ़ गिर रही थी। उधर का ऑपरेटर वार-वार 'वेट' कहता होगा, क्योंकि वह वार-वार हीटर पर हाथ सेंकने जाता होगा। अस्सी मील की दूरी पर वहाँ क्या हो रहा होगा? वहाँ तोपों के चलने की आवाजें सुनायी तो नहीं दे रहीं होंगी? कई सवाल एक साथ उसके दिमाग़ में कौंधने लगे। कुछ के जवाव तुरंत मिल भी जाते, लेकिन हर जवाव कई नये सवालों को जन्म देता है। और फिर जवाव मिलकर भी लाभ क्या था? स्थिति में क्या फ़र्क़ पड़ने वाला था?

सुपरवाइज़र चंदनसिंह अंदर आया। आते ही प्राप्त संदेश देख लेने की उसकी आदत थी। लेकिन आज वह ख़ामोश था। हीटर के पास जाकर वह खड़ा रहा। उसके दोनों हाथ ग्रेटकोट की जेब में थे। दाढ़ी के सफ़ेद वाल गले में लिपटे हुए मफ़लर से वाहर चमक रहे थे। क्या वह भी उन्हीं सवालों से परेशान था? इंसान के भीतर की इंसानियत को जीवित रखने के लिए, और युद्ध की निस्सारता को समझने के लिए क्या हर पीढ़ी को युद्ध की यातनाओं से गुज़रना जरूरी है? हवलदार चंदनसिंह के सामने सन अड़तालिस या सन वयालिस होगा। हवलदार चंदनसिंह हीटर के लाल तार को देखता हुआ पत्थर की मूरत की तरह खड़ा था। संदेश पर 'क्लिअ-रेन्स' हस्ताक्षर करते वक़्त चंदनसिंह से डिकी ने पूछा, "क्यों मेजर, क्या वात है?" हवलदार चंदनसिंह विलकुल हिला नहीं। वह एकटक हीटर को घूर रहा था। वोलते वक़्त उसकी आवाज़ मोटी और भारी थी।

"होल सिख रेजिमेंट इज़ वॉण्ड आउट!"[1] डिकी ने फ़ौरन 'मोर्स-की' उठायी, और 'मैसेज' पास करने लगा। उसने अपने दिमाग़ को शब्दों और अक्षरों पर केंद्रित करने की कोशिश की। वह कुछ भी सुनना नहीं चाहता था। पूरी रेजिमेंट ख़त्म हो चुकी थी। सो व्हॅट? तो? उसका क्या संवंध है इस सवसे? दूसरे शब्द उसके कानों से टकरा रहे थे। दिमाग़ तक पहुँचते भी थे या नहीं—उसकी समझ में नहीं आ रहा था।

"क्या कहा?" किसी ने पूछा।

"होल सिख रेजिमेंट इज़ वाश्ड आउट।"

---

1. पूरी सिख रेजिमेंट का सफाया हो गया है।

"और शेखू ?"

शांति ! कभी न खत्म होनेवाली शांति ! और फिर एकदम चंदनसिंह की आतंक-भरी चीख।

"मैंने कहा न, होल सिख रेजिमेंट इज वाश्ड आउट।"

डिकी की उँगलियाँ मोर्स-की पर चलती रहीं। सैकड़ों ऑपरेटर इन तारों से और इस हवा में सैकड़ों मील की दूरी पर लाखों शब्द भेज रहे थे। टेलीप्रिंटर कट-कटा रहे थे। टेलीफोन ऑपरेटर चीख रहे थे। मैसेंजर मोटर-साइकिलों पर दौड़ रहे थे। दूर आर्मी हेडक्वार्टर के ऑपरेशन-रूम के नक्शों पर रंग-बिरंगी पिनों को खिसकाया जा रहा होगा। सीमा की मोटी लकीर के पास लगी बड़ी पिनों में से एक पिन अब हटा ली जायेगी। लड़ाई के क्षेत्र की एक ऐक्टिव यूनिट, एक जुझारू रेजिमेंट—एक ड्राइंग पिन ! अफसर उस पिन को निकाल लेगा। वेस्ट-पेपर बास्केट में फेंक देगा। कर्नल फ़िलिप्स को शायद वह जानता होगा।

मुझे पता करना होगा, शेखू कैसे मरा ? मरने से पहले आखिरी हिचकी के समय उसने क्या कहा होगा ? उसके दिमाग में कौन-सी बात होगी ? ए पैनी फ़ॉर हिज लास्ट थॉट, बट डज इट मैटर नाऊ ?[1] शेखू मर चुका है।

1 उसकी आखिरी बात के लिए एक पेनी, लेकिन अब उससे क्या फायदा ?

ज्ञात

रंगिया स्टेशन पर उसने गाड़ी वदली। उसकी वदली वेस्टर्न कमांड की एक यूनिट में कर दी गयी थी। पुराने यूनिट में जैसे-तैसे डेढ़ साल कटा था कि ट्रांसफ़र हो गया था। पर इसमें कोई अप्रत्याशित वात भी नहीं थी। यह आम रिवाज था। आर्मी के इस विशाल विस्तार में, समस्या पैदा करने वाले तथा अनावश्यक ठहराये जाने वाले किसी भी आदमी की कहीं भी वदली हो सकती थी। उसने आर्मी से डिसचार्ज के लिए अर्जी दी थी। कमांडिंग अफ़सर ने उसे इंटरव्यू के लिए वुलाया था। उसकी वात सुनी थी, और उसे उपदेश के दो-चार पाठ भी पढ़ाये थे। वाद में एक हफ़्ते के भीतर उसके हाथ में पोस्टिंग ऑर्डर थमा दिया गया था।

डिकी ने अपना किट सँभाला। कंधे पर राइफ़ल लटकाये अव वह नये यूनिट के रास्ते पर चला जा रहा था। गाड़ी वहुत धीमे-धीमे आगे बढ़ रही थी। सभ्य दुनिया से वह दूर जा रहा था। वातावरण में मादकता थी। वहुत दूर तक सुपारी के वग़ीचों, धान के खेतों और छोटे-मोटे तालावों से पूरा इलाक़ा ढँका हुआ था। क्षितिज के पास पहाड़ों की चोटियाँ झाँक रही थीं। वीच-वीच में छोटी-छोटी वस्तियाँ मानो धरती पर छिटकी पड़ी थीं। वह वहुत खुश था।

स्टेशन पर गाड़ी रुकी। चार-पाँच स्त्रियाँ अंदर घुसीं। डिव्वे में ज्यादा लोग नहीं थे। पास वैठे हुए सीमा-सड़क विभाग के एक आदमी ने उस लड़की की तरफ़ देखा। वह अव तक कोई पत्र पढ़ रहा था। ढलती

उम्र का यह आदमी, आधे घंटे से पत्र पर आँखें गड़ाये कुछ सोच रहा था। शायद पत्र उसके घर से आया होगा। उन पंक्तियों से झाँकती स्मृतियों में वह डूब गया होगा। उन स्त्रियों में से दो लैंटीन के पास की खुली जगह में नाचने-गाने लगीं। उस आदमी ने अपना पत्र जेब में रख लिया और नाचने वाली लड़कियों की तरफ देखने लगा। शुरू में ही उनमें से एक लड़की बेंच पर आकर जम गयी थी। गोद में रखे हुए हार्मोनियम पर उसकी उँगलियाँ बड़ी सहजता से चल रही थीं। वह किसी असमिया लोक-गीत की धुन बजा रही थी। उनमें से एक प्रौढ़ किस्म की स्त्री उस आदमी की बगल में आकर बैठ गयी, बिलकुल उससे सटकर। बीच-बीच में वह उस गीत पर दाद देती जा रही थी और कहीं-कहीं संगत भी कर रही थी। आदमी ने अपना हाथ स्त्री की पीठ पर रख दिया। उसकी उँगलियाँ अब स्त्री के स्तनों पर थीं। आदमी ने कुछ पूछा, स्त्री ने कुछ जवाब दिया, लेकिन हार्मोनियम की आवाज़ और गीत के शोर में डिकी को कुछ भी नहीं सुनायी दिया। पर इसकी ज़रूरत भी क्या थी? आदमी के होंठों से फूटने वाली हँसी और भूखी नज़रों से सब-कुछ साफ था। उसने जेब में हाथ डाला, टटोला और एक चवन्नी निकालकर स्त्री की हथेली में दबा दी। चवन्नी निकालते वक्त जेब में ठुँसा हुआ पत्र उछलकर बेंच पर आ रहा और फिसलकर पैरों के पास गिर पड़ा। स्त्री कुछ नाराज़ लगी, फिर भी उसने चवन्नी ले ली। उसे अंटी में खोंसकर वह सामने वाले दूसरे आदमी के पास जा बैठी। डिकी ने झट से एक रुपये का नोट निकाला और बेंच पर रखकर अपने साथ वाले यात्री की तरफ़ देखने लगा। सामने वाली बेंच पर बैठे दो सिपाही हँस रहे थे। वे उन लड़कियों को घूर रहे थे। उनकी नज़रें भूखी थीं। लड़कियों ने अब तक किसी दूसरे आदमी पर क़ब्ज़ा कर लिया था। दोनों लड़कियाँ अगल-बगल बैठी उस आदमी से बातें कर रही थीं। उनका ध्यान आदमी की जेब की तरफ था। डिकी एक तरफ खिसककर अपने में सिकुड़ गया। उनमें की एक लड़की डिकी की तरफ खिसकी। डिकी ने उँगली से नोट की तरफ इशारा करते हुए होंठों पर मुसकराहट लाने की कोशिश की। वह चाहता था कि लड़की उसकी नज़रों में उभरी घृणा या अरुचि को देख न पाये। इन लड़कियों को

इस तरह नाचने-गाने के लिए क्यों विवश किया जाता है? ये लोग अपनी आबरू का सौदा क्यों करती हैं? वह परेशान था। लड़की एक क्षण के लिए दुविधा में पड़ी उसे देखती रही। फिर उसने झट से नोट उठा लिया। वह थोड़ी-सी झुकी और माथे से नोट को लगाकर उसने सलाम किया और फिर पीछे मुड़ गयी।

मिसाभारी स्टेशन पर गाड़ी रुकी। पाँच-छः नंगे बच्चे शोर करते डिब्बे में धँसे और दूसरे दरवाज़े से निकल गये। उसने बाहर देखा। गाड़ी सिग्नल कॉसिंग के पास खड़ी थी। सामने की झोंपड़ी में एक स्त्री गोद में बच्ची को लिये खड़ी थी, गाड़ी आगे बढ़ती जा रही थी, और स्त्री अपनी अविचल, स्थिर दृष्टि शून्य में गड़ाये वहीं खड़ी थी। डिकी ओझल होते हुए उस दृश्य को खिड़की से देख रहा था। पता नहीं, उस बच्ची के भविष्य में क्या लिखा था? दस-बारह बरस बाद वह भी कहीं रेल के डिब्बे में हार्मोनियम के सुरों पर नाचती होगी...शायद!

चीन की तरफ़ से जो मार पड़ी थी, अब उसके निशान कुछ-कुछ मिट चुके थे। लेकिन जवान अब भी उन प्रसंगों को पूरी तरह भूल नहीं पाये थे। अब भी कभी बातचीत के दौरान पुराने लोग विशेष स्थानों या मील के पत्थरों से जुड़ी स्मृतियों को दोहराते रहते थे। इधर के लोगों में सीमा के उस पार रहने वाले लोगों के प्रति द्वेष, चिढ़ और क्रोध की भावनाएँ अब भी शेष थीं। लेकिन आज वह बात नहीं रही थी। 'वास्तव में वे सारे प्रसंग और उनके साथ जुड़ी असफलताएँ उस युद्ध से संबद्ध थीं, जो सही मानों में, कभी लड़ा ही नहीं गया। फिर भी वहाँ शर्म या अपमान का भाव नहीं था।

उसकी यूनिट शहर से दो-ढाई मील की दूरी पर थी। रेलवे लाइन से लगकर जाने वाला रास्ता गाँव तक जाता था। गाँव वैसे छोटा था, फिर भी सुन्दर-सुडौल मकान, छोटे-छोटे बँगले, बाँस की चार-दीवारियाँ, बग़ीचों में खुशबूदार फूल, ठिगनी साँवली असमिया महिलाएँ, लेकिन कांति सतेज, लंबे-लंबे बाल, सादा पहनावा, होंठों पर निरंतर मुसकान---यह था परिवेश।

यूनिट में अलग-अलग 'कोरों' के लोग शामिल थे। नेफा के इलाके में सड़क बनाने का काम चल रहा था। इसलिए सैकड़ों आदमी बारिश में, सर्दियों में तथा बर्फ़ में रात-दिन लगातार काम कर रहे थे। वहाँ की विभिन्न टुकड़ियों में एकसूत्रता लाकर उन्हें आवश्यक चीज़ें पहुँचाने का काम उसकी यूनिट को सौंपा गया था। इसलिए उसकी यूनिट में 'सप्लाई कोर' के लोगों की संख्या ज्यादा थी। यहाँ पी० टी०, ड्रिल या परेड कुछ भी नहीं था। ऑफ़ टाइम में केवल सिविल ड्रेस में हर कोई शहर घूम आ सकता था। यूनिफ़ार्म या ढीला-ढाला सफ़ेद मुफ़्ती ड्रेस पहनकर ही बाहर जाने की पाबंदी नहीं थी। इसलिए डिको बहुत खुश था। जबर्दस्ती ऊपर से थोपे गये बंधनों का आभास, कदम-कदम पर डरा देने वाली वे परिस्थितियाँ यहाँ नहीं थीं।

उसके सब-स्टेशन में काम करने वाले सभी ऑपरेटर अनुभवी थे। वैसे काम कोई ज्यादा नहीं था। सिग्नल सेंटर के काम के अलावा और कोई खास परेशानी नहीं थी। इसलिए सिग्नल कम्युनिकेशन का स्टैण्डर्ड बढ़िया था। अधिकांश अफ़सर शहर में ही रहते थे, इसलिए ओ० आर० मेस का खाना अच्छा नहीं होता था। ओ० आर० लोगों के नाम के राशन में कटौती करके उसे अफ़सरों के बीवी-बच्चों के नाम कर दिया जाता था। इसे कुछ अनुचित भी नहीं समझा जाता था। फ़ील्ड एरिया के अफ़सरों के लिए फ़ैमिली के साथ रहना क़ानूनन मना था, इसलिए उन्हें क्वार्टर एलाउन्स नहीं दिया जाता था। सिविल एरिया में किराये पर मकान लेने पड़ते। महँगाई के इन दिनों में मकानों के किराये, घर के खर्चे और फिर प्रेस्टीज—एक साथ निभाना कोई आसान थोड़े ही था! इसलिए अगर मेस के राशन का कुछ 'हिस्सा' अफ़सरों के बीवी-बच्चों के काम आ जाये तो बुरी बात क्या थी? कैम्प-कमांडर मेजर पडगीकर शहर में ही रहते थे। रोज सुबह एक जवान दूध के कैन भी साहब के बँगले पर पहुँचा आता था। मिलिटरी कैन्टीन में भरपूर माल भरा रहता था। मार्केट रेट से यहाँ सभी चीज़ें सस्ती मिलती थीं। लेकिन बूट-पॉलिश की डिबिया और ब्रश को छोड़कर बाक़ी सभी चीज़ें खरीदने के लिए मेजर पडगीकर या क्वार्टर-मास्टर लेफ़्टिनेंट-कर्नल तलवार की मंजूरी जरूरी थी। हर महीने रेल से माल

ाता और संबंधित स्थानों पर पहुँचा दिया जाता। चालीस-पचास मील
के अहाते में फैले तमाम यूनिटों के अफ़सरों के परिवार इसी शहर में
रहते थे। हफ़्ते-भर में जितनी बार जी चाहता अफ़सर लोग अपने घरों के
चक्कर लगा आते, आर्मी की जीपें जो इनकी सेवा में रहती थीं!

डिब्रूगढ़ में जब उसकी टेंपरेरी ड्यूटी लगी तो डिकी को बहुत ख़ुशी हुई। शहर से दूर, ट्रांज़िट कैम्प में उसका ऑफ़िस था। एक कमरे में ट्रांसमीटर लगा था और दूसरे में दो ऑपरेटरों को रहने के लिए जगह दी गयी थी। झोपड़ी के दरवाज़े से ब्रह्मपुत्र का जल-विस्तार दिखायी देता था। बारिश के मौसम में उसकी इस झोपड़ी में घुटनों तक पानी जमा हो जाता था। उसका साथी नायर बड़ा शांत क़िस्म का आदमी था। न किसी के लेने में, न देने में—बस अपना काम भला और दाम भला। 'सेट' पर ड्यूटी करना, वक़्त से खाना और सोना, कभी-कभार लायब्रेरी चले जाना, अख़बार देख लेना, रेडियो सुन लेना, बस—इसके अलावा नायर को और कोई शौक़ नहीं था। कंपाउंड लाँघ जाओ तो बस्ती की तरफ़ जाने के लिए नदी के किनारे पच्चीस-तीस फ़ुट ऊँचे बाँध पर से रास्ता बना था। यहाँ ब्रह्मपुत्र ने एक मोड़ लिया था, इसलिए उसका प्रवाह किनारे तक पहुँचता था। बाढ़ से सुरक्षा के लिए यह बाँध बनाया गया था। दस-बारह फ़ुट चौड़ा होगा। नदी के प्रवाह के बीच में आड़ी दीवारें खड़ी की गयी थीं, ताकि उसका बहाव रोका जा सके। इन दीवारों के सहारे पानी में बड़े-बड़े पत्थर छोड़े जाते और बाँध तैयार किये जाते। बाढ़ आती, बाँध ढह जाते। फिर बाँध बनाये जाते। संघर्ष निरंतर चलता रहता—मनुष्य और प्रकृति का संघर्ष।

बाँध के नीचे झोंपड़ियों का झुंड था। इनमें रहने वाले अधिकांश लो
बंगाली मुसलमान थे। पूर्वी पाकिस्तान से मज़दूरी की तलाश में ये लो
इधर आते रहते थे। रोज़ी-रोटी की तलाश में भटकने वाले इन लोगों
लिए दो देशों के बीच की सीमा-रेखा की कोई बाधा नहीं थी। बाँध पर
गुज़रने पर दो दृश्य एक साथ दिखायी देते थे—एक तरफ़ ब्रह्मपुत्र की ल
लाल पानी की जलधारा, दूसरी तरफ़ झुग्गी-झोपड़ियाँ और उनमें र
वाले अधनंगे स्त्री-पुरुष। झोपड़ियों के पीछे की तरफ़, कुछ दूरी पर

के समानांतर एक सड़क बनी थी। सड़क के दोनो किनारे छोटे-छोटे खूबसूरत बँगले थे। इनके अहातों में लगे नारियल और सुपारी के ऊँचे-ऊँचे पेड़ों के कारण बँगले बाहर से दिखायी नहीं देते थे। झोपड़ियाँ बँगलों से बहुत दूर थीं। डिकी कभी-कभी सोचता था कि अगर नदी का पानी और झोपड़ियों के रहने वाले अपनी सीमाएँ तोड़कर आगे बढ़ जायें तो इन बँगलों का क्या हाल होगा ! वैसे, ब्रह्मपुत्र हर साल अपनी सीमा तोड़ देती है, लेकिन बँगलों तक नहीं पहुँच पाती। तलहटी की झोपड़ियाँ ब्रह्मपुत्र के आक्रमण को रोक नहीं पातीं। हर साल बाढ़ में इन्हें नेस्तनाबूद हो जाना पड़ता है। अस्थायी स्थिरता पाने वाले ये सैकड़ों लोग, फिर पेट-पीठ बाँधे, रोटी की तलाश में भटकने लगते हैं। जिंदगी-भर एक ही तलाश—रोटी; एक ही धुन—रोटी ! जीवन का अर्थ—रोटी और सिर छुपाने की जगह की तलाश ! सत्य की तलाश, आत्मा की तलाश, परमात्मा की तलाश ! अपनी क्षीण दृष्टि को दूर तक फैलाकर देख पाने की शक्ति उसमें नहीं थी। अपनी दुबली-पतली हथेलियाँ ऊँची तानकर सुदूर सत्य को छू सकने की ताकत उसके पास नहीं थी। जैसे-तैसे शरीर के बोझ को ढो लेने वाले लड़खड़ाते पैरों में वहाँ तक पहुँचने की शक्ति नहीं थी। जिंदा रहने के लिए पेट को भरना जरूरी है और पेट के लिए जिंदा रहना आवश्यक है। एकमात्र संघर्ष यही है। यही उसके ज्ञान की सीमा थी।

डिकी हर शाम बस्ती की तरफ घूमने के लिए निकल जाता। हवा में रजनीगंधा की महक फैली रहती। हलके-फुलके फिल्मी संगीत की धुनें कानों में पड़ती रहतीं। कभी-कभी हँसी का कोई फव्वारा छूटता हुआ सुनायी दे जाता। क्षण-भर के लिए उसकी चाल धीमी पड़ जाती। अँधेरे में वह अपने क़दम धीरे-धीरे बढ़ाता। मस्ती-भरे इस माहौल में खुद को खो देने की वह कोशिश करता। लेकिन दिमाग में विचारों का बवंडर फिर भी उठता ही रहता।

बस्ती वालों में जवानों के प्रति सम्मान या आदर की भावना बिलकुल नहीं थी। उल्टे, इन्हें फौज के आदमियों से डर लगता था, नफरत होती थी। छोटी-छोटी घटनाओं से यह डर, यह नफरत जाहिर भी होती थी। इन आदिवासियों के मन में जवानों के प्रति चिढ़ क्यों है ? क्यों ये लोग

नफ़रत करते हैं उनसे ? लेकिन क्या यह नफ़रत सिर्फ़ फ़ौज वालों के प्रति है ? या बस्ती के सभ्य समाज के प्रति भी है ? कहा नहीं जा सकता।

सच पूछा जाये तो, सभ्य कहलाने वाले हमारे समाज ने इन्हें क्या दिया ? सिफ़लिस, गनोरिया, अभाव, दरिद्रता, युद्ध, रक्तपात, स्पर्धा, असंतोष !

फ़ौज और होती ही क्या है ? सभ्य समाज के खूँख़ार दाँत ! चबाने वाले दाँत ! आदिवासियों की स्थिति में सुधार के प्रयास चल रहे थे। इस पर हज़ारों-लाखों रुपये ख़र्च किये जा रहे थे। लाखों लोगों के श्रम, ख़ून और पसीने की क़ीमत देकर इन चौड़ी-चौड़ी घाटियों में, और टीलों पर सड़कें बनायी जा रही थीं। इस जानलेवा काम के लिए दक्षिण भारत के दूसरे सिरे से जवान बुलवाये गये थे। जिन लोगों ने कभी इतनी कड़ी सर्दी देखी ही नहीं थी, वे लोग ख़ून ठिठुराने वाली इन सर्दियों में दिन-रात काम कर रहे थे। फिर भी यहाँ के रहने वालों में उनके प्रति कृतज्ञता तो दूर रही, ज़रा-सी हमदर्दी भी नहीं थी। हरी जीपों को देखकर ये लोग सहमे हुए जानवरों की तरह जंगलों और घाटियों में छिप जाते थे। इसमें उनका क्या क़सूर ? बस्ती से दो मील पर पक्की सड़क बनी है। रात-दिन जीपें दौड़ती हैं। लेकिन इससे गाँव की स्थिति में क्या फ़र्क़ पड़ा है ? वही चल रहा है जो सैकड़ों वर्षों से चला आ रहा है। अगर फ़र्क़ पड़ा भी है तो— इनकी ज़िंदगी पहले से बदतर ही हुई है।

देश की आज़ादी दिल्ली के लालक़िले पर फहरा रही है। यहाँ के आदमी को, गांधी कौन था—पता नहीं है। समाजवाद किस चिड़िया का नाम है—वह नहीं जानता। जब तक इनकी रोज़मर्रा की ज़िंदगी बदलती नहीं तब तक शासन किसका है, वहाँ जनतंत्र है या फ़ासिज़्म, इनके लिए कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता। और मैं इन लोगों की सुरक्षा के लिए यहाँ तैनात हूँ। किसकी ? और किससे सुरक्षा ? ब्रह्मपुत्र से, बाढ़ से, भुखमरी से, बीमारी से या अज्ञान से ? इनका और देश का एक-दूसरे से सरोकार क्या है, रिश्ता क्या है ?

कुछ दूर चलने पर सड़क के दोनों किनारे चाय के बग़ीचे दिखायी पड़ते हैं। सैंकड़ों एकड़ भूमि पर ये फैले हुए हैं। हज़ारों मज़दूर इनमें काम

आठ

डिब्रूगढ़ से लौटे डिकी को दो हफ़्ते हो चुके थे। शो ख़त्म हुआ। उसने घड़ी देखी। साढ़े बारह बजे थे। रविवार, छुट्टी का दिन, दोपहर का वक़्त! फिर भी लोगों की ज़्यादा आवाजाही नहीं थी। फ़िल्म में भी कोई ख़ास भीड़ नहीं थी। कुल चालीस-पचास लोग होंगे। दो-दो, तीन-तीन के गुट बनाकर ये लोग अलग-अलग दिशाओं में चले जा रहे थे। वे तेज़-तेज़ चल रहे थे। उसे लगा, वे लोग ज़रूरत से कुछ ज़्यादा ही ज़ोर से बोल रहे हैं। लगता था, उनके लिए इस निःशब्द शांति और घुटन पैदा करने वाली क्षति को सह पाना संभव नहीं था। वे उसे तोड़ने का प्रयास कर रहे थे। उनके शोर में कुछ अप्राकृतिक, अस्वाभाविक लग रहा था। नुक्कड़ पर कॉफ़ी-हाउस के मालिक से उसने यूँ ही पूछ लिया, "एनी न्यूज़?"[1] "नथिंग न्यू,"[2] मालिक ने जवाब दिया। डिकी ने महसूस किया कि वह ज़रूरत से कुछ ज़्यादा ही ज़ोर से चीख़ा था। उसने इधर-उधर देखा और तेज़ चलने लगा। 'नथिंग न्यू', वह बुड़बुड़ाया। उसने जेब से रूमाल निकाला और हथेली और उँगलियाँ पोंछकर आसमान की तरफ़ देखने लगा। सफ़ेद बादलों के कुछ टुकड़े धीमी गति से क्षितिज की ओर बढ़ रहे थे। डॉ० राय के बँगले से रवीन्द्र-संगीत की मंद धुन सुनायी पड़ रही थी : "आज यह दूसरा दिन।"

न्यूज़-पेपर स्टाल बंद हो चुका था। उसने सोचा कि लौटकर कॉफ़ी-

---

1. कोई ख़ास ख़बर ? 2. नयी कोई नहीं ?

हाउस चला जाये और कड़क कॉफ़ी पी जाये। पिछले साल इसी कॉफ़ी-हाउस में अपने साथियों के साथ, या कभी-कभी अकेला भी वह कई बार आ चुका था। होटल के मालिक से बहुत अच्छी जान-पहचान हो गयी थी। उसे लगा कि इस बार कॉफ़ी-हाउस का मालिक उसकी तरफ़ व्यंग्य-भरी मुसकान से देखेगा, क्योंकि वह फ़ौजी जो था, और मानो चीन द्वारा दिये गये अल्टीमेटम के लिए अकेला वही जिम्मेदार था। पुल पार करते वक्त उसने नीचे की तरफ देखा। जसोदा की झोपड़ी के बाहर नायक विजय-कुमार निढाल लेटा था। पास ही बोतल पड़ी दीरत रही थी। डिग्री ने सोचा, विजयकुमार को रिक्शा में डालकर यूनिट ले जाना चाहिए। इसके पहले भी दो-तीन बार उसने विजयकुमार को इसी हालत में यूनिट पहुँचाया था। "ओ, व्हॉट डिफ़रेन्स इज इट मेक?"[1]

वह आगे बढ़ा। तेजपुर बुकस्टाल पर रखी हुई किताब 'रेड स्टार ओवर चायना' ने उसका ध्यान आकृष्ट किया। क्या सचमुच चीन गड़बड़ करेगा? चीन पाकिस्तान की क्यों मदद कर रहा है? इस सवाल का जवाब उसे नहीं मिल पा रहा था, औरों के जवाबों से उसका समाधान नहीं हो सका था। क्या माओ का अतिरिक्त राष्ट्राभिमान क्रांतिकारी तत्त्ववेत्ता माओ पर नहीं हावी हो गया था?

तालाब का चक्कर लगाकर वह आगे बढ़ा। ऊपर की तरफ़ रास्ता सँकरा होता जा रहा था। उस ऊँचे टीले पर एक छोटा-सा बगीचा था—'चंपापार्क'। गेट पार करके अंदर दाखिल होने के बाद वह रुका। फिर सबसे ऊँची जगह पर बने हुए वाटर-टैंक के पास वाले छोटे टीले पर खड़ा होकर नीचे की तरफ देखने लगा। नदी के जल को छूकर इधर आती हुई ठंडी हवा के कारण उसके चेहरे पर ताजगी दौड़ गयी। उसकी नज़रें ब्रह्मपुत्र के किनारे के भू-विस्तार पर विचर रही थीं। टीले के नीचे एक वृहाकार झील फैली है। उसके परे दूर चमकते हुए पानी तक पहुँचती हुई रेत। दूर कुछ नावें मंथर गति से बीच धारा की ओर बढ़ रही थीं। कुछ औरतें रेती पार करके झील की तरफ़ बढ़ रही थीं। वह टाँगें फैलाकर

1. अरे, इससे क्या फ़र्क पड़ता है?

बैठ गया। उसकी नजरें क्षितिज से टकराकर झील पर लौट आतीं। दो-तीन गिद्ध पंख पसारे डुबकियाँ लगा रहे थे। पानी से बाहर निकलकर वे रेत में अपना सीना टिका देते और अपने जंगी पंख फैलाकर रेत में पड़े रहते। दो गिद्ध हवा में चक्कर काट रहे थे, नीचे धरती का मुआइना कर रहे थे। डिकी का जी चाहा कि वह उन गिद्धों को पकड़े। दो गिद्ध नदी की धारा की तरफ़ झपट्टा मारकर नीचे उतरे। उनमें से एक किनारे के पेड़ पर जा बैठा, दूसरा पानी पर उतरा। अपने बदन पानी में भिगोकर तीनों गिद्ध, दूसरे गिद्धों के पास जा बैठे। उन्होंने अपनी चोंचें रेत में गड़ा दीं।

उसने ऊपर देखा। आसमान में कई गिद्ध चक्कर लगा रहे थे। एक जत्था धीरे-धीरे नीचे उतर रहा था। उनके पीछे एक और क़तार थी। उसने देखा, बस्ती की तरफ़ से सैकड़ों गिद्ध नदी के किनारे जमा हो रहे थे। वे उड़कर पेड़ों पर बैठ जाते, फिर झपटकर नीचे उतरते। वहाँ से तीन-चार मील तक का इलाक़ा दिखायी पड़ता था। पूरे इलाक़े पर गिद्धों का झुंड मँडरा रहा था। "ओ हेवन्स! व्हॅट इज़ इन देअर माइन्ड्स!"[1] उसने नीचे देखा! हज़ारों गिद्धों का एक रेला रेती पर सुस्ता रहा था। बीच ही में उनमें से कुछ ऊपर उड़ते, नदी के प्रवाह पर अपने पंख फड़-फड़ाते। उनके गीले बदन रेत पर फैल जाते,उनकी तादाद अब भी बढ़ रही थी। दोपहर की घुटन-भरी अटूट शांति! उस पर ज़रा भी आघात किये बिना ये हज़ारों जीव वहाँ जमा हो रहे थे। पता नहीं, किस अनाम आदेश का पालन कर रहे थे, वे किस शोक-दिवस पर मातम-पुर्सी के लिए यहाँ जमा हुए थे? क्या उनकी तीखी नज़रों ने भविष्य को भाँप लिया था? अनगिनत पंख! अनगिनत चोंचें! तेज़ नुकीले नाख़ून। व्हॅट आर दे प्लानिंग? जवाब में वह कुछ सुनना चाहता था, लेकिन परिवेश स्तब्ध था। एक अप्राकृतिक ख़ामोशी, भव्य रंगमंच पर मूक-नाट्य चल रहा था। क्या होने जा रहा है? "व्हॅट इज़...स्ट्रेंज रिच्युअल?"

1. हे परमात्मा! इनके दिमाग़ में क्या योजना है?

उसे लगा, मस्तिष्क अब संवेदन-शून्य हो गया है। कल रात का हैंग-ओवर क्या अब भी शेष है? छः महीनों के बाद डिब्रूगढ़ से वह कल ही लौटा था। वह यहाँ वापस आना नहीं चाहता था। लेकिन उसका रिलीवर आ चुका था, इसलिए रुकने का सवाल ही नहीं था। पुराने साथी मिले थे। हवलदार डाकरे ने बचाकर रखी हुई आधी बोतल निकाली थी। वह चार पेग ले चुका था। दूसरे ग्रुप में बैठे गिल ने उसे बुलाया। इस ग्रुप में आकर उसने और दो पेग चढ़ा लिये। फिर तीसरी मंडली ने उसे निमंत्रित किया। उसे अब भी याद आ रहा था कि कैसे नौवाँ पेग गले में जलता हुआ उतर गया था। उसके बाद मस्ती का आलम। पूरा दृश्य अस्पष्ट और धुंधला मालूम पड़ रहा था। उन पिछले छः महीनों में पीने की इ[illegible] कभी नहीं हुई थी। लेकिन कल उसने बेरोक-टोक पी थी [illegible] आया था तब रात के दो बज चुके थे। बरामदे में यह [illegible] था। काफ़ी ठंड थी। सारा शरीर सर्दी से अकड़ गया।

स्तब्ध जकड़ गया था।'डैम यू, यू फ़ूल्स !' किस पर क्रोध कर रहा था
ह ? किस पर खीझ रहा था ? कुछ समझ में नहीं आ रहा था।

उसने एक बार फिर उन गिद्धों की तरफ़ देखा। वही आलम अव
ी था। अनचाहे उसका हाथ, ढेले की तलाश में छटपटाने लगा था। उसे
यक़ीन था कि बड़े-से-बड़ा पत्थर भी उस स्थिति में विघ्न पैदा नहीं कर
सकता। अज्ञात भय की एक लहर उसके शरीर में दौड़ गयी। उस भयानक
दृश्य से नज़रें हटा लेने की उसने कोशिश की—लेकिन वे फिर से हठात्
उसी निःशब्द भीड़ पर जम जातीं। मंत्रमुग्ध व्यक्ति की तरह वह उस दृश्य
को एकटक घूरता रहा।

पीछे आहट हुई। उसने गरदन घुमायी, कोई उसको देख रहा था।
कोई स्त्री थी—बड़ी-बड़ी आँखें, ठिगना सुडौल शरीर, हलके पीले रंग की
साड़ी, लंबे खुले बाल। उसके चेहरे पर अस्पष्ट-सी मुसकान थी। एक झटके
के साथ सब-कुछ रेंगता हुआ उसकी आँखों में समा गया। वह होश में आया।
वह अब उस स्त्री को एकटक देख रहा था। स्त्री ने रेत के दृश्य की ओर
ठोड़ी से इशारा किया। डिकी ने उधर एक दृष्टि डाली, और फिर उसकी
तरफ़ देखने लगा। स्त्री की नज़रों में भय था। डिकी ने कंधे विचकाये...
आँखें झपकायीं। शायद, पहले कभी उसने उस स्त्री को कहीं देखा था, शायद
डॉ० राय के बँगले के पास। दुबारा उससे भेंट हो रही थी। उसने याद
करने की कोशिश की। कुछ क्षण पहले के सम्मोहन से वह अब मुक्त हो
चुका था। उसे लगा कि बोझ हलका हो गया है। वह अब खुलकर साँस ले
सकता है। अपनी जगह से वह उछल पड़ा और दो लम्बे डग भरकर उस
स्त्री के पास आकर बैठ गया। डिकी की तरफ़ देखकर उसने कहा :

'की दारुण !'

'यस, फ़ियरसम ! बट स्ट्रेंजली फ़ैसिनेटिंग !' उसने जवाब दिया।

•

अगले दिन, दोपहर के खाने पर वह मेस गया था, चारों ओर मूंग की दा
की तीव्र गंध फैली थी। इस गंध ने उसे मानो पीछे धकेल दिया था। उस

...ा लेते हुए पत्थर की शानदार इमारतों में बैठे, यहाँ के बूढ़ों, युवकों, छोटे
...चों तथा अजन्मी संतानों के भविष्य को तहस-नहस कर देने वाले फ़ैसले
...र रहे होंगे, और यहाँ इन बेचारों को अपने भविष्य का फ़ैसला करने
...ाली अज्ञात शक्तियों की कल्पना तक नहीं है।

...वह बस्ती में दाख़िल हुआ। दुकानें खुल चुकी थीं। फिर भी सड़क पर भीड़ नहीं थी। एकाध आदमी अख़बार हाथ में लिये गुज़रता दिखायी देता। वह कॉफ़ी-हाउस गया। उसने आज वेटर से रोज़ की तरह बात नहीं की। मेज़ पोंछते वक़्त वेटर भी आज मुसकराया नहीं था। कॉफ़ी पीकर वह बाहर आया और बस्ती से दूर निकल गया। पूरा शहर मेंढक की तरह दुबका पड़ा था—ऐसा मेंढक जिसे किसी ने छू लिया हो और इस कारण वह घबराकर अपना जिस्म फुलाये दुबका पड़ा हो। उसे लगा कि शहर ख़ामोश है, मानो किसी हमले के इंतज़ार में हो। चौराहे के पास शोर सुनायी पड़ा। पचास-साठ आदमियों की वहाँ भीड़ थी। डिकी अपने रास्ते निकल जाना चाहता था, लेकिन ठिठककर भीड़ की तरफ़ बढ़ गया।

भीड़ से घिरा एक आदमी सिर घुटनों में डाले बैठा था। उसका शरीर काँप रहा था। उसकी घिग्घी बँध गयी थी और वह कराह रहा था। ज़मीन पर ख़ून के क़तरे दिखायी दे रहे थे। सिसकते-सिसकते वह कुछ कह रहा था, अपनी बात बार-बार दोहरा रहा था। डिकी की समझ में कुछ भी नहीं आ रहा था। उसने देखा कि उस आदमी के कपड़े तार-तार हो गये हैं। शायद झोंपड़-पट्टी में रहने वाला कोई मज़दूर होगा। एक जवान लड़का उसके कंधों को मज़बूती से पकड़े खड़ा था और दो आदमी उसे घेरे खड़े थे। उनकी नज़रों में स्वाभिमान था, मानो उन्होंने कोई बहुत बड़... पराक्रम किया हो। उनमें से एक आदमी अपनी आस्तीनें ऊपर चढ़ाता हुआ चीख़-चीख़कर भीड़ से कुछ कह रहा था। वह गालियाँ बके जा रहा था। उसकी आवाज़ में घृणा थी। नीचे बैठे हुए आदमी की तरफ़ वह तिरस्क... की नज़रों से देख रहा था। सुनने वाले आश्चर्यचकित थे। वे स्थिति...

मज़ा ले रहे थे। गालियाँ बकते हुए उस आदमी ने मज़दूर की कमर पर लात मारी। वह लुढ़क गया। उसकी आँखें भीड़ को देख रही थीं। उसकी नज़रों में एक ही भाव था---आतंक! भयानक खौफ़! पिंजरे में बंद पक्षी की तरह वह सहमा हुआ था। उसके होंठों से खून निकल रहा था। एक होंठ शायद फट गया था। उसके गंदे कपड़ों पर खून फैला हुआ था। जवान ने उसे एक और घूंसा जमाने के इरादे से अपना हाथ ऊपर उठाया। भीड़ और सिमट आयी।

वह मज़दूर पूर्वी बंगाल से आया था, पेट भरने के लिए। मुसलमान था। उस समय भारत और पाकिस्तान के बीच जंग चल रही थी। भीड़ के देशाभिमानी लोगों ने उसे पकड़ लिया था। "जासूस है, पाकिस्तानी जासूस! कबूल कैसे नहीं करता! पीटो साले को! मारो सुअर को! स्साला, नमकहराम!" पिटता हुआ वह चीख रहा था। रो रहा था। लोगों से दया की याचना कर रहा था। किसी को यकीन था कि वह बेगुनाह है।

लेकिन लोग इस तरह का व्यवहार क्यों कर रहे हैं? व्हाई डोन्ट दे सी द ऑबविअस? दे आर टैरिफाइड। वे स्वयं भयंकर त्रास के शिकार हो चुके हैं। असुरक्षा और भय की भावना ने उन्हें घेर लिया है। इससे वे मुक्ति चाहते हैं, वे सहमे हुए हैं, लेकिन स्वयं अपना मुकाबला करने की हिम्मत उनमें नहीं है। वे स्वयं अपनी बुज़दिली, नामर्दी और भय से घबरा गये हैं। लेकिन वे उलटे यह साबित करना चाहते हैं कि वे डरपोक नहीं हैं और न घबराये हुए ही हैं, बल्कि वे तो बहादुर हैं! इसीलिए इस गरीब आदमी पर टूट पड़े हैं।

नहीं, यह जासूस हो ही नहीं सकता! उसे बचाने के लिए मुझे कुछ करना चाहिए। उसकी इच्छा हुई कि भीड़ को कुछ समझाये-बुझाये। लेकिन उसे यह भी पता था कि उसके हस्तक्षेप से कोई फ़ायदा नहीं होगा। भीड़ से टक्कर लेने का साहस वह जुटा नहीं पाया। उसे खुद पर ग्लानि हुई। उसे अपने-आप से घृणा होने लगी।

आई मस्ट नॉट हेट माईसेल्फ। खुद से नफ़रत, खुद पर दया! ज़हर की इस जड़ को अपने दिमाग़ में पनपने नहीं दूंगा। इट इज़ वेरी रेशनल

ंट आई ऐम डुइंग। क्या कर सकता हूँ मैं ? क्या मैं इन लोगों को समझा कता हूँ ? इन लोगों की अक़्ल मारी गयी है। विचार-शक्ति भ्रष्ट हो यी है। अंधे क्रोध ने इन्हें घेर लिया है। जमीन की परतों के नीचे गड़ा हुआ इनका पशु जागृत हो उठा है और अब यह शैतान संस्कृति और मानवता की परतें फाड़कर वाहर निकल आया है। आदमी के अंदर बैठा हुआ यह राक्षस। क्या मैं इसके ख़िलाफ़ लड़ सकता हूँ ?

उसने चारों ओर दृष्टि डाली। वह उधर खड़ी थी, जमघट से दूर। भाग निकलने की तैयारी में हो जैसे। वह उसके निकट आया। फिर भी स्त्री का उधर ध्यान नहीं गया। वह भीड़ से घिरे उस मजदूर को देख रही थी। चेहरे पर डर और पीड़ा के भाव स्पष्ट थे। डिकी ने महसूस किया कि स्त्री की साँस जोर से चल रही है। वह देख रहा था कि उसके माथे पर पसीने की बूँदें जमा हो गयी हैं। डबडबायी आँखें जमघट पर स्थिर हैं, होंठ काँप रहे हैं। वह बहुत ज्यादा घबरा गयी थी। डिकी ने अहिस्ता से उसका हाथ छुआ। वह इतनी डर गयी...डिकी को लगा कि वह चीख़ पड़ेगी। कुछ क्षणों के लिए उसके चेहरे पर कोई भाव नहीं उभर सका। फिर धीमे से वह अस्फुट स्वर में बोली, "चलो, यहाँ से कहीं दूर चलें, जल्दी।" उसकी आवाज काँप रही थी। डिकी के कुछ कहने से पहले ही वह चल पड़ी। डिकी उसके पीछे लंबे-लंबे क़दम बढ़ाता निकल गया। दोनों अब साथ-साथ चल रहे थे।

शहर के वाहर चले आने के वाद उन्होंने पक्की सड़क छोड़ दी और एक पगडंडी पर चलना शुरू किया। रास्ते में पहाड़ीनुमा एक टीला पड़ता था। सैंकड़ों वर्षों की निरंतर आवाजाही के कारण वह चिकना हो चुका था। डिकी उस पर से कूदकर नीचे उतरा। उसने अपना हाथ बढ़ाया और युवती ने अपना हाथ उसके हाथ में दे दिया। दोनों नीचे उतरे। युवती क हाथ अब भी काँप रहा था। समतल भूमि पर आ जाने के वाद वे वाँसों व जंगल की तरफ़ जाने वाले रास्ते पर मुड़ गये। उसने युवती की तर

देखा और पूछा, "तुम इतनी डरी हुई क्यों हो?" जवाब में कुछ कहने से पहले उसने अपने माथे पर हाथ फेरा। "वह आदमी पूर्वी बंगाल का था। मैं भी पूर्वी बंगाल से आयी हूँ।"

डिकी खामोश था। उसने युवती का हाथ अपने हाथ में लेकर पूछा, "मुझे डिकी कहते हैं, तुम्हें?"

"सुनीता," उसने जवाब दिया।

दोनों ने एक-दूसरे की तरफ़ देखा। दोनों हँस पड़े। काफ़ी दूर तक जंगल के समानान्तर चलती हुई वह पगडंडी बाँस के जंगल का चक्कर काटकर घास के मैदान में समाप्त हो जाती थी। जंगल के बीचोंबीच ज़मीन का एक अंडाकार खाली टुकड़ा था। शायद पहले कभी यहाँ तालाब रहा होगा, और अब चारों ओर से बहकर आने वाली मिट्टी के कारण भर गया होगा। यह पूरा हिस्सा हरी घास से ढँक गया था। परे सुपारी का बग़ीचा दिखायी दे रहा था। मृदु और मांसल हरियाली! वे चले जा रहे थे। ज़मीन की नमी के कारण उनके पाँव गीले हो गये थे। वे सुपारी के बग़ीचे की तरफ़ जा रहे थे। अब उसने युवती की बाँह थाम ली थी। दोनों मौन, परस्पर सटकर चल रहे थे। एक जगह पर, पेड़ों के तले पत्थर के खंभे ज़मीन पर आड़े डाल दिये गये थे। शायद यहीं, पहले कभी मंदिर रहा होगा। ये पत्थर उसी के भग्नावशेष होंगे। वहीं एक शिला पर वे दोनों बैठ गये। चारों ओर बाँस का घना जंगल था। बाहर की दुनिया, मानो इस जंगल ने छिपा ली थी। ऊपर आसमान का गोल छाता। कहीं दूर से ढोलक बजने की आवाज़ आ रही थी। वे दोनों एक-दूसरे से सटकर बैठे थे। डिकी ने उसका दाहिना हाथ अपने हाथ में पकड़ रखा था और उसकी हथेली की रेखाओं पर अपनी उँगलियाँ फेर रहा था। ऊपर हवाई जहाज़ की घड़घड़ाहट सुनायी पड़ी। डिकी ने ऊपर देखा। आवाज़ तेज़ होती गयी। भयंकर आवाज़ करता हुआ एक जहाज़ उनके सिर पर से आगे निकल गया। वह उसके और पास आ गयी। डिकी ने अपने हाथ से उसकी पीठ घेर ली और आहिस्ता से उसके कंधे थपथपाने लगा। वह चाहता था कि उसका साहस बँधाने के लिए कुछ कहे, लेकिन उसे शब्द

सूझ रहे थे। युवती का सिर उसके कंधे पर टिका था। नज़रें सामने यानी की लहरों में खो गयी थीं।

सुनीता ! कौन होगी सुनीता ? क्या अता-पता होगा उसका ? यह नवी लड़की कितने विश्वास से मेरे कंधों पर माथा टिकाये बैठी है ? र मैं उसके सहवास में इतना मौन और विकारहीन क्यों ? मेरे दिमाग़ उसके बारे में क्यों नहीं कुछ सवाल पैदा होते ? अब तक मैं जो भी चिता रहा हूँ, वह फिर क्या था !

उसके बालों की भीनी गंध उसे सुख दे रही थी।

हम अब यहाँ कितनी देर और रुकने वाले हैं ? यह मौन, निकटता और यह एकांत ! एक घंटे बाद, एक महीने बाद, आगे भविष्य में क्या रूप होगा इन सबका ? क्या है मेरे मन में ? डू आई वान्ट टु सिड्यूस दिस वूमन ?[1]

वह अपने हाथ की छोटी उँगली से उस युवती के पंजे को सहला रहा था। हवाई जहाज की घड़घड़ाहट अब भी कानों में गूंज रही थी। स्थितियों के सामने वह विवश था। पर स्थिति के लिए आख़िर कौन ज़िम्मेदार था ? स्थितियों को किसने बनाया ? मनुष्य ! उसने ऊपर आसमान की तरफ़ देखा। वह हवाई जहाज अगर लौट आये और आग के गोले बरसाने लगे तो...तो, वह कर क्या सकता है ? क्या वह मौत से घबरा तो नहीं रहा है ? उसे अपनी बेबसी, लाचारी और नपुंसकता से चिढ़ होने लगी। सुनीता की हथेली गुलाबी और नर्म थी। उसके पंजे की पकड़ में सुनीता की हथेली छोटे बच्चे की हथेली की तरह दिखायी दे रही थी। उसने उसकी चूड़ियों पर आहिस्ता से टिचकी लगायी। चूड़ियों की खनक बड़ी मधुर थी। उसने फिर से टिचकी लगायी। एक बार फिर उसे लगा कि उसका दिमाग़ कुछ भी नहीं सोच रहा है। सुनीता के बारे में मानो उसने सोचना ही बंद कर दिया था। गरदन घुमाकर उसने सुनीता की तरफ़ देखा। वह भी उसे देख रही थी। उसकी आँखों में मंद-मंद मुसकान थी। आँखों की मुसकान जब होंठों पर उतरी तब नीचे का होंठ थोड़ा-सा बाहर की ओर उभर आया। युवती ने अपनी ठोड़ी उसके कंधे पर टिका दी; डिकी ने अपनी

1. क्या मैं इस औरत को पथ-भ्रष्ट करना चाहता हूँ ?

पांचों उँगलियां उसके बालों में गड़ा दी। उँगलियों को फैलाकर उसने युवती का सिर हिलाया। अब युवती के होंठों की मुसकान स्पष्ट और खिली हुई थी।

उसने युवती की आंखों में देखा। उसके कधों को छुआ। युवती मुड़ी और उसकी आंखों में आँखें डालकर देखने लगी। डिकी ने अपने होंठ धीरे से उसकी पलकों पर टिका दिये...।

शाम को जब वह लौटा तो उसका मन एक अनाम और अगम्य ससार में विचरण कर रहा था। मन का बोझ हलका हो गया था। चिंताएँ मिट चुकी थीं। परस्पर आलिगन में दोनों काफी देर तक बैठे रहे थे। लेकिन उस आलिगन में कहीं भी मस्ती नहीं थी, आवेग नहीं था, उतावलापन नहीं था। उसके बालों में अपना मुंह छिपाते वक्त उसने उसके कानों, गालों और होंठों का स्पर्श किया था। युवती के दिल की धड़कनें और उसके शरीर की थरथराहट उसने महसूस की थी। बालों की जाली में से सुपारी के पेड़ों की लम्बी कतारें उसने देखी थीं। ढोलक की धीमी आवाज़ उसकी नसों में समा गयी थी। वर्षा की एक फुहार ने उन्हें उठा दिया था। आसमान पर बादल घिर रहे थे। "चलो, चलें," उसने कहा। एक बार फिर उसी हरियाली में पैर गड़ाये वे पगडंडी पर आ गये थे। दोनों एक साथ रुके थे। "सुनीता !" डिकी ने कधे पकड़कर उसे अपने करीब खींच लिया था। पर उसके चेहरे के पास जब डिकी के होंठ पहुँचे थे तो उसने अपनी आँखें। बद कर ली थीं। अधे होंठ युवती के होंठों को खोजते हुए भटक रहे थे—उसके गालों पर, ठोड़ी पर। जोर की बारिश होने लगी थी। वह उससे अलग हुआ था और सड़क की तरफ मुड़ते हुए उसने कहा था, "दोपहर में !"

उसका जी चाहा कि अपना अनुभव किसी मित्र को बताये। अपने सुख में किसी और को शामिल कर ले। लेकिन उस अनुभव को, उससे मिले सतोष को, बयान करना कैसे सभव था ? कर भी दे, फिर भी उसका निजी अनुभव औरों की समझ में कैसे आयेगा ? उसे सुन लेने पर शायद साबत

कहेगा, 'आखिर साले, असमिया छोकरी को पटा ही लिया न !' गिल बड़ा दुखी होगा और कहेगा, 'बेवक़ूफ़, मौक़ा खो दिया ! बुद्धू मज़ा कर लेना था।' डाकरे की प्रतिक्रिया सबसे अलग होगी। वह कहेगा, 'आख़िर, असमिया लड़की ने ही तुझे पटा लिया। कौन है वह लड़की ? रहती कहाँ है ?' डिकी इनमें से किसी भी मित्र की शंकाओं का समाधान नहीं कर सकेगा। वास्तव में उन चंद घंटों के दौरान, उसने स्वयं अपने भविष्य के बारे में कुछ भी नहीं सोचा था। उसने लड़की से न तो उसके अतीत के बारे में कोई सवाल पूछा था, और न ही उसके निजी जीवन के बारे में। फिर भी उसके सामीप्य में बीता हर क्षण उसे सुखकर लगा था। चाह बढ़ गयी थी। *क्या सचमुच भविष्य में ये संबंध और भी गहरे और दृढ़ होने जा रहे थे ?* लेकिन उस समय भविष्य की चिंता उसे कहाँ थी ?

वे दोनों नदी के किनारे बैठे थे। अँधेरा बढ़ता जा रहा था। साँझ की किरणों से उनके पैरों के पास का पानी चमक रहा था। लहरों का स्पर्श उन्हें सुख दे रहा था। उस पार कितने ही पेड़ों की मिली-जुली छायाओं ने आकाश की पृष्ठभूमि पर एक बहुत बड़ी छायाकृति बना दी थी। अपनी आँखें उसके कंधों पर टिकाकर वह उससे लिपट गयी थी, मानो एक महाकाय पशु अपने शिकार की तलाश में दुबका बैठा हो। वह कुछ बोले जा रही थी, कानाफूसी के स्वर में। लेकिन डिकी का ध्यान उधर नहीं था। वह समझ गया था कि सुनीता बेचैन है। अपनी बेचैनी को छिपाने के लिए वह हमेशा इसी तरह बड़बड़ाती रही है। आज भी उसकी आवाज़ सहज नहीं थी। वह ख़ुद अनुभव कर रही थी कि जरूर कुछ फिसलता जा रहा है—फिसलना चाहता है। लेकिन उसे मानने को वह तैयार नहीं थी। आगे चलकर इन संबंधों के समाप्त हो जाने का आभास उसके लिए बिलकुल ही अनपेक्षित तो नहीं था। फिर भी यथार्थ को झुठलाने की वह कोशिश कर रही थी। क्या चल रहा होगा उसके दिमाग़ में ? उस पर जुदाई का क्या परिणाम होगा ? डिकी सोचता रहा।

इस दूसरी मुलाक़ात के बाद का समय कितनी तेज़ी से भाग रहा था। चीन का 'अल्टिमेटम' तीन दिन आगे बढ़ गया था। न युद्ध, और न शांति। बड़ी विचित्र स्थिति पैदा हो चुकी थी। राजनीतिक स्तर पर सोच-विचार

चल रहा था। लेकिन इन सबसे उसका कोई वास्ता नहीं था। उस पत्थर पर दोनों घंटों बैठे रहते, एक-दूसरे के निकट, मौन, अपनी कल्पनाओं की दुनिया में खोये हुए। कभी जब उसका मूड होता, खूब बातें करती। अपने बचपन, परिवार, सहेलियों आदि के संबंध में बताती रहती। वह सुनता रहता। कभी वह अपनी मानसिक उलझनों को शब्दों में ढालने की कोशिश करता। परेशान करने वाले सैंकड़ों सवालों के समाधान खोजने की कोशिश करता। इस स्थिति में वह अपने-आपको संबोधित करता रहता, नाटक में 'स्वगत' की तरह। फिर भी वह उसे सुनती रहती। दोनों के बीच आत्मीयता, प्यार और आकर्षण उत्तरोत्तर बढ़ता गया। दोनों इसे महसूस करते थे। उसे कभी-कभी आश्चर्य होता कि कैसे सुनीता उसके अन्तर्मन को समझ जाती है। उस वक्त अगर उससे कोई यह कहता कि उनके संबंध शाश्वत नहीं रह सकेंगे तो वह कभी यकीन न करता। उन दिनों तो तमाम उम्र उसी के साथ बिताने की तैयारी थी उसकी। फिर भी उसने अपने प्यार को शब्दों में कभी व्यक्त नहीं किया। इसे वह टालता रहा। 'अमर प्रेम' जैसी बचकानी कल्पना में वह विश्वास नहीं कर सकता था। समय के शाश्वत होने पर उसे विश्वास नहीं था। उसके लिए शाश्वतता का अर्थ था मौत! अशाश्वतता का अर्थ था नित्य परिवर्तन, अर्थात जीवन। लेकिन जब भी उसे ख्याल आता कि विछोह अटल है, उसे बड़ा कष्ट होता। इसलिए निकटता बनाये रखने के लिए अनजाने ही वह प्रयास करता रहता।

उसने सुनीता के मन की गहराई में उतरकर टटोलने की कोशिश की थी। क्या वह उस कटु यथार्थ का मुकाबला कर सकेगी? वह जानना चाहता था। यह तो तय था कि वह सुनीता के भाव-जगत से सदा के लिए जुड़ नहीं सकेगा। सुनीता की इच्छा भी हो, तब भी यह संभव नहीं हो सकता। चाहे खुद लालायित क्यों न हो. भविष्य का बदलना मुमकिन नहीं था। वर्तमान उसका नहीं था। वह तो अतीत से नियंत्रित था। उसका व्यक्तित्व उसके अतीत का निष्कर्ष था। इसलिए अब व्यक्तित्व को अपनी पसंद के साँचे में उंडेलकर आकृतिबद्ध करना संभव नहीं था। और सुनीता इस कठोर यथार्थ को नकार रही थी। वह सपनों के कल्पना-लोक में

विचरण कर रही थी। लेकिन यह उसका बचपना था। माना कि यथार्थ का सामना करना कष्टप्रद होता है, लेकिन उसे नकारने का यह मार्ग नहीं था। मुक्ति का रास्ता यह नहीं था।

मन से वे दूर-दूर चले जा रहे थे। शरीर के स्तर पर क्या इस दूरी को पाटना संभव था? उसने अपना हाथ सुनीता के कंधे पर रखा, और सुनीता का शरीर कड़ा हो गया। डिकी उसके शरीर के स्वभाव से परिचित था। अपनी उँगलियों से उसकी पीठ सहलाते समय डिकी ने कई बार सुनीता के शरीर की थिरकन महसूस की थी। वह अपना मुंह उसके जूड़े से सटाकर चंपा के फूलों को सूंघने लगा। डिकी के होंठ उसके कानों के पास थे। सुनीता की सांस वह सुन रहा था। सांस तेज चल रही थी। आलिंगन के लिए उसका शरीर अधीर हो उठा। उसने सुनीता की ठोड़ी पकड़कर उसका चेहरा अपनी तरफ़ मोड़ा। उसके बालों में से उस पार की छाया-कृति नजर आ रही थी। अपने गालों पर उसके होंठों का हलका-सा स्पर्श उसे महसूस हुआ। उसके होंठों पर अपने होंठ रखकर वह एक क्षण स्थिर रहा। वह मुड़कर उसके बिलकुल सामने हो गयी। अब उसका हाथ सुनीता की पीठ पर था। वह और निकट हो गयी। सर्दी के कारण उसके होंठ फट गये थे। डिकी अपने-आपको भूल जाना चाहता था, अपने में खो जाना चाहता था। उसकी जीभ सुनीता के होंठों की पंखुड़ियों को अलग करके उसके दांतों को स्पर्श कर रही थी। सुनीता का समूचा शरीर कांप रहा था। सुनीता के हाथ उसके कंधों को कसकर जकड़े हुए थे। वह अपनी पीठ पर उसकी हथेलियों का दबाव महसूस कर रहा था। सोचने की सारी प्रक्रिया रुक गयी थी।

आकाश की पृष्ठभूमि पर वह छायाकृति अब भी दिखायी दे रही थी, मानो कोई विकराल पशु शिकार की घात में दुबका बैठा हो। ऊपर तारे टिमटिमा रहे थे। सर्दी बढ़ गयी थी। 'नो, 'इट्स ऑफ़ नो यूज़, नायदर कैन ही लूज़ हिमसेल्फ़ नॉर कैन ही फ़ाइंड हर!'[1] उसने अपनी आँखें बंद कर लीं। एक बार फिर उसका हाथ सुनीता के शरीर पर भटकने लगा।

1. 'नहीं, इसका कोई फायदा नहीं। न वह स्वयं हार सकता है और न ही उसे प्राप्त कर सकता है!'

नौ

उसके खाट की निवाड़ काफ़ी ढीली पड़ चुकी थी। लेटो तो झोली में पड़े होने का अनुभव होता था। नीचे रखे ट्रंक से पीठ लगती रहती थी। फिर भी उसने निवाड़ कसवायी नहीं। किसी चीज़ में उसे रुचि नहीं रह गयी थी। सब-कुछ नीरस और ऊबा देनेवाला था। पूरा-का-पूरा यूनिट निकम्मा और बेकार था। मानो फ़ौज के लम्बे-चौड़े कारोबार में यह यूनिट शामिल ही नहीं था। कई अनुभवी वायरलेस-ऑपरेटर तथा रेडियो-मैकेनिक उस कंपनी में बेकार समय काट रहे थे। पिछले दो साल में किसी मैकेनिक ने पेंचकस तक नहीं पकड़ा था, न किसी ऑपरेटर ने 'मोर्स-की' को छुआ था। बाहर खड़ी तीन टन और एक टन वाली गाड़ियों में कई ट्रान्समीटर-सेट रखे थे। साफ़ करते रहने के अलावा इनका और कोई उपयोग नहीं था। इस यूनिट में आये उसे तीन-चार हफ़्ते हो चुके थे। लगता था, महीनों गुजार दिये हैं। सुबह-सुबह, तीन-चार मैकेनिक बाथरूम के चारों ओर की घास काटते रहते थे तो उतने ही ऑपरेटर मेस के चारों ओर की। कुछ लोग ऑफ़िस के चारों ओर यही काम करते रहते। कुछ परेड-ग्राउंड पर फावड़े लिये खड़े रहते! सुबह उठते ही फ़ुल यूनिफ़ॉर्म में ग्राउंड पर हाज़िर रहना पड़ता था। 'सावधान! लेफ़्ट...राइट...दायाँ...बायाँ...दायाँ...बायाँ...पीछे मुड़।' इसमें चालीस मिनट निकल जाते। बैरकों में लौटकर हाफ़-पैन्ट और पी० टी० शूज पहने-पहने ही ब्रेकफ़ास्ट। उसके बाद बनियान पहने फावड़ा और खुरपी लेकर ग्यारह बजे तक परेड-ग्राउंड पर।

नहीं चाहता। ओबे द ऑर्डर।[1] निकल जाओ, यहाँ से। मार्च ऑफ़ !"

डिकी को लगा जैसे उसे 'अतिरिक्त' खुशी हुई है। इफ़ लाइफ़ इज़ डल, आई मस्ट मेक इट बिअरेबल।[2] उसने इधर-उधर देखा, दूर खड़े वे आठ जवान अब उसी की तरफ़ देख रहे थे। बाथरूम के पास के जवानों का ध्यान भी इधर ही था। अपनी आवाज़ धीमी करते हुए शांति से उसने कहा, "मेजर जी, गाली देने की ज़रूरत नहीं है।"

हवलदार निरंजन ने इधर-उधर देखा। सबके सामने इस आदमी से उलझना ठीक नहीं होगा, उसने सोचा। क्रोध का कड़वा घूंट पीते हुए उसने अपने-आपको शांत किया और धमकी के स्वर में बोला, "चलो, कंपनी सूबेदार सा'ब के पास चलो।"

क्रमशः बदलती स्थितियों में डिकी दिलचस्पी ले रहा था। उसे लगा, बहुत दिनों के बाद वह खुली हवा में साँस ले रहा है। उसका दिमाग़ अब काफ़ी उत्तेजित हो रहा था। उसने बड़े आत्मविश्वास के साथ क़दम बढ़ाये। वह हवलदार निरंजन के पीछे चल दिया। चलते समय उसने अपनी बेरे कैप कान की तरफ़ और खिसका ली। कंपनी-ऑफ़िस पहुँचने पर हवलदार निरंजन ने उससे बाहर ही रुकने के लिए कहा। डिकी सामने वाले पेड़ की छाया में खड़ा रहा। हवलदार निरंजन अंदर चला गया। उधर से एक जवान चोरी-चोरी डिकी तक पहुँचा। उसने ऑफ़िस के दरवाज़े की तरफ़ नज़र डाली, इधर-उधर देखा, फिर धीरे से पूछा, "क्यों उस्ताद जी, की हुआ ?"

"सत्यजित बाबू की नानी मर गयी," डिकी ने गंभीर होकर कहा।

क्षण-भर के लिए बंगाली बाबू कुछ परेशान ज़रूर हुआ, लेकिन व्यंग्य समझ में आने पर उसका ग़ुस्सा दूर हो गया। "बोका—!" वह बुड़बुड़ाया। डिकी मन-ही-मन हँसा।

---

1. आज्ञा का पालन करो।
2. यदि जिन्दगी उदासी से भरी है, तो मुझे उसे सहने-योग्य बनाना ही होगा।

सूबेदार मणियार बाहर आया। निकट आने तक डिको स्थिर दृष्टि से उसकी तरफ़ देखता रहा। सूबेदार कुछ कहने ही को था कि डिको ने फटाक से जूता पटककर उसे कडक सलामी दी। सूबेदार झटके से एक कदम पीछे हटा। उसने सलामी ले ली।

"व्हॅट इज रॉंग ?"[1] सूबेदार ने पूछा और हवलदार निरंजन की तरफ देखा। "यू डिसओबेड द ऑर्डर ?"[2] सूबेदार ने फिर पूछा। "यस सर, आई सेड, आई वुड नॉट डू दैट टाइप ऑफ़ वर्क।[3] मैं अपने ट्रेड का काम करना चाहूँगा। इस काम के लिए मुझे पगार नहीं दी जाती।"

"तुम्हें किस काम के लिए पगार दी जाती है, उसके बारे में हम सोचेंगे। तुम अपना काम करो।" सूबेदार क्रोध में नहीं था। डिको के करीब आया और उसके कंधे पर हाथ रखकर कहने लगा—"देखो उस्ताद, पागल मत बनो। दो महीने बाद तुम पक्के लान्स-नायक बनोगे। कितने साल हुए तुम्हें मिलिटरी में आये ?"

"चार साल।"

"चार साल ? चार साल और गुजर जायें तो तुम नायक बनने लायक हो जाओगे।...यू आर लकी। अपना कॅरियर मत ख़राब करो। समझदारी से काम लो।"

"जी ? जी, बहुत शुक्रिया...लेकिन...लेकिन मुझसे यह नहीं होगा," डिको ने जवाब दिया।

"देखो उस्ताद, आर्मी में ऑर्डर ओबे किया जाता है, चाहे वह गलत हो या सही। ऑर्डर इज ऑर्डर। फ़र्स्ट ओबे इट, देन रिपोर्ट।"[4]

कुछ क्षणों के लिए डिको चुप रहा। उसने सोचा, यही टर्निंग प्वाइंट है। उसका जवाब उसके भविष्य को निर्धारित करने वाला था। उबा देने वाली इस एकरस दुनिया से उसे नफ़रत हो रही थी। बट आई मस्ट बी

---

1. क्यों परेशान हो ?
2. तुमने आदेश का पालन नहीं किया ?
3. हाँ श्रीमान जी, मैंने यह कहा था कि मैं इस प्रकार का कार्य नहीं करूँगा।
4. आदेश तो आदेश है। पहले उसका पालन करो, फिर कुछ कहो।

रीज़नेबल,[1] उसने सोचा। लेकिन इसके पहले ही उसके होंठ खुल चुके थे। "'आई डोन्ट थिंक इट इज़ सेन थिंग टु डू। आई ऐम रिपोर्टिंग बिफ़ोर ओवेइंग।"[2]

सूबेदार मणियार अधीर हो उठा। बायें हाथ की छड़ी दायें हाथ में आ गयी। गरदन नीची करके वह छड़ी का सिरा जूतों की नोंक पर पटकता रहा। इधर हवलदार निरंजन अंदर-ही-अंदर बेचैन हो रहा था। सूबेदार ने अपनी गरदन ऊपर उठायी। आग बरसाती हुई आँखों से हवलदार की तरफ़ देखकर उसने कहा, "कल ओ० सी० सा'ब के सामने हाज़िर करो इस जवान को। चार्जशीट के बारे में बाद में सोचेंगे। मार्च ऑफ़!" मुड़ते वक़्त उसने डिकी पर एक फिसलती नज़र डाली।

डिकी वहाँ से सीधे बैरक की तरफ़ चल दिया। बैरक में आकर वह धड़ाम से खाट पर गिर पड़ा और लेटे-लेटे छत की तरफ़ देखता रहा। फिर सिरहाने पड़ी हर्मन हेस की किताब 'सिद्धार्थ' उठाकर पढ़ने लगा। दोपहर की चाय के वक़्त हवलदार निरंजन ने उसे एक तरफ़ बुलाकर कहा, "देखो डिकी, ठंडे दिमाग़ से काम लो। शांति से सोचो। सोचो, इसका नतीजा क्या होगा? तुम्हें कोई तकलीफ़ है, तो मुझे बताओ। आख़िर हमारा काम और है ही क्या? अभी कुछ बिगड़ा नहीं है। मैं तुम्हारी मदद करूँगा। लेकिन तुम कुछ बताओ तो।" हवलदार निरंजन चाहता था कि बात आगे न बढ़े।

"जी, बहुत अच्छा। लेकिन मुझे कोई तकलीफ़ है ही नहीं," डिकी ने जवाब दिया। वह बात को इस तरह ख़त्म करना नहीं चाहता था...और इस तरह हार भी नहीं मान लेना चाहता था। वह पीछे नहीं हटना चाहता था।

---

1. मुझे तर्कसंगत होना चाहिए।
2. "लेकिन मेरे विचार में यह करना उचित नहीं है। मैं आदेश का पालन करने से पहले ही आपसे कह रहा हूँ।"

अगले दिन सुबह नौ बजे डिकी जब ऑफ़िस के अहाते में खड़ा था तो कल वाला बंगाली बाबू आज भी कल की जगह पर बैठा घास साफ़ कर रहा था। डिकी की तरफ़ देखकर वह मुसकरा रहा था। उधर खड़े नायक जाधव ने ऐसी मुद्रा बनायी जैसे वह डिकी को पहचानता भी न हो। लेकिन नायक शर्मा तनिक मुसकराया था और गरदन घुमाकर दफ़्तर में घुस गया था। कुछ देर बाद सूबेदार भणियार बाहर आया। उसने डिकी का ड्रेस चेक किया। बेल्ट के बकल चमक नहीं रहे थे। जूतों की नोंक की पॉलिश उतर गयी थी। भणियार ने उससे कुछ नहीं कहा। उसके होंठ भिच गये। आँखें तरेरते हुए वह चिल्लाया, "चलो, अंदर चलो। सावधान! दाहिने मुड़, तेज़ चल! बायें घूम...बायें घूम!" डिकी रोब से चलता हुआ अंदर ऑफ़िस में कंपनी-कमांडर के कमरे तक आकर रुका।

"दाहिने घूम ..बायें घूम, थम!...दो कदम पीछे चल! सैल्यूट!... सा'ब, सिक्स...टू...थ्री...सेवन...सिक्स...टू...फ़ाइव, लान्स-नायक डिकी. सर।"

लंबी भव्य मेज़ के पीछे फ़ाइलों में अपनी आँखें गड़ाये बैठे मोहता ने गरदन ऊपर उठायी। उसके सिर पर इक्का-दुक्का बाल थे। रोबदार चेहरा धारदार नाक, बंद होंठ, पतली ठोड़ी। उसके दोनों हाथ मेज़ की कगार पर थे। उँगलियों के जोड़ों पर सुनहरे बाल चमक रहे थे। अपनी सुनहरी फ्रेम वाली ऐनक उसने बड़ी नज़ाकत से उतारी। उसकी उँगलियाँ कुछ मोटी थीं—पोरों के पास गाँठें। चश्मा उतारने के बाद मेजर मोहता ने अपना शरीर ढीला छोड़ दिया और टाँगें फैलाकर कुछ देर निर्विकार एक स्थिर नज़रें गड़ाये डिकी की तरफ़ ताकता रहा। 'अ चीप ट्रिक टु इरिटेटिंग'[1] डिकी मन-ही-मन बुड़बुड़ाया। वह मेजर की आँखों में आँखें डालकर [illegible] रहा।

मेजर मोहता ने ऐनक फिर चढ़ा ली और ट्रे में से [illegible] पन्ने उलटने लगा। कुछ सेकंड गुज़र गये।

"वेल, डिकी...वेल, डिकी, लान्स-नायक डिकी [illegible]

---

1. 'परेशान करने के लिए क्या छोटी बात!'

काफ़ी अच्छा है। गुड डिसिप्लिन। ए-वन इन ट्रेड। ट्रांसफ़र्ड विद स्पेशल प्रोमोशन। गुड, वेरी गुड ! मेरे ख़याल से छः हफ़्ते बाद, तुम पक्के लान्स-नायक बनोगे। ज़रा सोच-समझकर काम लो। दिमाग़ को ज़रा ठंडा रखो।"

"जी...!" डिकी ने हामी भरी। सारा मज़ा किरकिरा हो गया था। शुरू होने से पहले ही खेल ख़त्म हो चुका था। क्रोध की एक लहर उसके शरीर में दौड़ गयी। कनपटियाँ गर्म हो गयीं। हथेलियों में पसीना छलक आया। उसका जी चाहा कि उछलकर मोहता के टेबिल पर खड़े होकर ज़ोर-ज़ोर से चीखे। लेकिन क्या चीखें ? टेलिप्रिंटर पर अनेकों बार पढ़ा हुआ वह निरर्थक वाक्य उसके दिमाग़ में तैरने लगा :

'नाऊ इज़ द टाइम फ़ॉर ऑल द मेन टु कम टु द एंड ऑफ़ द पार्टी।'

उसकी समझ में नहीं आ रहा था, यह निरर्थक वाक्य उसे क्यों याद आ रहा है ! अपने भीतर छलाँग भरती उद्रेक की लहरों पर उसे आश्चर्य हो रहा था। लेकिन फिर भी भीतर से कहीं वह बहुत शांत था। क्रोध और आतंक का निरीक्षण कर रहा था।

"जी," डिकी ने फिर हामी भरी। लेकिन अबकी बार उसकी 'हाँ' में ढिठाई थी, मस्ती थी, ललकार थी। डिकी की आवाज़ का फ़र्क़ मेजर मोहता शायद जान गया था। उसने फ़ाइल एक तरफ़ कर दी।

"देखो, लान्स-नायक डिकी," मेजर कुछ क्षण रुका, "आर्मी में सर्विस करना है तो सुपीरियर्स को ओबे करना पड़ेगा। ओबे द ऑर्डर्स। गिव रेस्पेक्ट टु योर सुपीरियर्स।[1] सर्विस करना है तो क़ायदे से करो। तुम्हें सर्विस करनी है या नहीं ?" यह सवाल नहीं, धमकी थी।

दीज़ ऑफ़िसर्स...दे ऑलवेज़ टॉक इन क्लीशेज़ लाइक मशीन्स ![2]

"जी नहीं !" डिकी ने तुरंत जवाब दिया। उसका दिमाग़ अब पूरी तरह जागृत था। कमरे में जो कुछ भी हो रहा था उसे वह देख रहा था। उसके कान हर आवाज़ को अपने अंदर समाये ले रहे थे। यह देखकर उसे आश्चर्य हुआ कि उसकी टाँगें काँप रही थीं।

---

1. आदेशों का पालन करो। अपने उच्च अधिकारियों का आदर करो।
2. ये अधिकारी तो हमेशा मशीन की तरह खड़क बात करते हैं।

मेजर मोहता के लिए डिकी का जवाब अनपेक्षित था। उसने अपने हाथ मेज़ के नीचे कर लिये और सँभलकर बैठ गया। सामने खड़ा सूबेदार मणियार बेचैन हो उठा। कुछ क्षण मेजर मोहता मेज़ को घूरता रहा। जब उसने अपनी नजर ऊपर उठायी तब उसके होंठों पर मुसकराहट थी।

"लेकिन क्यों? क्या तकलीफ है तुम्हें? बोलो, खुले दिल से कहो," मेजर मोहता ने कहा।

डिकी कुछ क्षण चुप रहा। "शैल आई, टेल यू द ट्रुथ, सर?" उसने पूछा।

"ऑफ कोर्स, ऑफ कोर्स! आई वॉन्ट द ट्रुथ। सच-सच कहो, डरो मत!" मेजर मोहता ने कहा। उस समय सूबेदार मणियार की साँस जोर से चल रही थी। डिकी ने स्पष्ट सुनी थी।

'डरो मत! माई फ़ुट!' वह मन-ही-मन बुदबुदाया। जवाब देते समय उसकी आवाज़ काँप रही थी, "मेरा विचार है कि आर्मी में सर्विस करके मैं राष्ट्र की सेवा नहीं कर रहा हूँ।"

कुछ क्षण...एक क्षण शांति। और दूसरे ही क्षण मेजर मोहता की मुट्ठियाँ मेज़ पर थीं। मुट्ठियों को जोर से पटककर वह झट से उठ खड़ा हुआ। रूखी और भारी आवाज़ में पता नहीं, वह क्या-क्या बकता रहा। क्रोध के कारण वह अपनी मातृभाषा पर उतर आया था। सूबेदार मणियार थोड़ा आगे खिसका। लेकिन किया क्या जाये, यह उसकी समझ में नहीं आ रहा था। परेशान होकर वहीं खड़ा रहा। कभी कंपनी-कमांडर मेजर मोहता को देखता तो कभी डिकी को। उसकी नज़र झूले की तरह झोंके खा रही थी। बाहर वाले ऑफ़िस में कुर्सी सरकाने की आवाज़ हुई। फिर किसी के दौड़ने की आवाज़। टाइप-राइटरों की टिप-टिप अचानक रुक गयी थी। मेज़ पर रखे बिजली के पंखे की हवा से ट्रे में रखे कागज फड़-फड़ा रहे थे। डिकी अपने दिल की धड़कन साफ सुन रहा था। उसे लगा कि उसके माथे पर पसीना निकल आया है। अब उसका पूरा शरीर पसीने में लथपथ था। पाँव काँप रहे थे। उसने अपना ध्यान मेजर मोहता की तरफ केंद्रित करने की कोशिश की।

मेजर मोहता "हाऊ यू डेयर, हाऊ यू डेयर!" की रट लगाये हुए

था। अपाहिज मशीन टूट चुकी है। डिकी ने उधर देखा।

अब मेजर मेहता की नज़रें डिकी पर जमी हुई थीं। डिकी भी उसी को देख रहा था। मेजर कुछ सँभल गया। कुर्सी पर बैठते हुए वह चिल्लाया, "ले जाओ इसे ! टेक हिम अवे। आई से हू इज़ ही ?[1] हू इज़ ही ?"

सूबेदार मणियार ने डिकी की बाँह पकड़ी और उसे बाहर ले गया। इस गड़बड़ी में, सूबेदार साहब परंपरागत 'डिसिप्लिन' को भी भूल गये थे। कंपनी-कमांडर सा'ब को सलामी दिये बग़ैर बाहर निकल आये थे। दफ़्तर के बाबू लोग चटपट अपनी-अपनी सीटों पर बैठ गये थे। हर कोई डिकी की तरफ़ देख रहा था। उनकी आँखों में कुतूहल था, विस्मय था, डर था। डिकी को इन पर तरस आ रहा था। वह ज़ोर से हँसना चाहता था। उसे पता था, वे लोग उसे पागल ठहरा रहे होंगे। सही भी है, क्योंकि बात उन लोगों की समझ से परे थी, या फिर ये लोग इसे समझना ही नहीं चाहते थे। लेकिन इसमें उनका कोई दोष नहीं था। उनका भय बिलकुल सहज और स्वाभाविक था। डिकी का दिमाग़ बेतरतीब ख़यालों, शंकाओं तथा भय और ख़ुशी के बवंडर से आक्रान्त था। ऐन्ड हियर एन्ड्स दैट मोनोटनी...![2]

उस दिन शाम को सेक्शन-कमांडर हवलदार नायर उसके पास आकर बैठा। सभी जवान गेम-परेड के लिए ग्राउन्ड पर जा चुके थे। बैरक में वह अकेला ही था। नायर के प्रति उसके दिल में इज़्ज़त थी। हवलदार होते हुए भी नायर फ़ालतू अकड़ नहीं दिखाता था। ऊपर से आने वाले आदेश नीचे वालों को लागू करते वक़्त भी बड़ी शिष्टता से पेश आता था बेशक, हवलदार नायर को उस वक़्त मेजर साहब ने ही भेजा था। नाय ने उससे कुछ नहीं पूछा था, सिर्फ़ अपने बारे में बोलता रहा। वह कह रह

1. मैं पूछता हूँ, कौन है यह ?
2. और इसी प्रकार वह उदासी-एकाकीपन टूटता है।

था—"उसकी पत्नी बीमार है। माँ-बाप बूढ़े हो चुके हैं। बच्चों की पढ़ाई तबाह हो रही है। तीन साल से मेडिकल 'बी' मिली हुई है। आजकल नाइट-ड्यूटी भी नहीं करता। आर्मी को अब उसकी सेवाओं से क्या लाभ ? लेकिन डिस्चार्ज भी नहीं देते। चाहे पेंशन की सुविधा न भी मिले, वह नौकरी छोड़ देना चाहता था। रेकॅर्ड ऑफ़िस ने उसका केस ओ० के० कर दिया था। लेकिन उन्हीं दिनों सरहद पर सरगर्मियाँ शुरू हुई और डिस्चार्ज के बजाय उसका तबादला इस यूनिट में कर दिया गया। अब फिर से वही चक्कर ! सर्विस तो तकलीफदेह है हो, लेकिन आर्मी से मुक्ति मिलना भी कहाँ आसान है ?कभी लगता है, सारी उम्र बेकार चली जा रही है। 'कोर्ट-मार्शल' करवा लेना वैसे आसान है, लेकिन कई बातों का ख्याल करना पड़ता है। छोटी-छोटी बातों या अस्थायी कठिनाइयों से परेशान होने में कोई फायदा नहीं। और फिर सिविल में भी क्या कम परेशानी है ? आर्मी में दस-पंद्रह साल सर्विस कर लेने के बाद, समझ लो, आदमी बिलकुल निकम्मा हो जाता है। अब यहाँ हवलदार हूँ, बाहर जाकर क्या करूँगा ?

"बस, जैसा चलता है, चलना पड़ता है। लान्स-नायक बनने में मुझे आठ साल लगे। तुम्हें इतनी जल्दी प्रोमोशन मिला है, हो सकता है कमीशन भी मिल जाये। सोचो...!" चलते-चलते नायर कुछ रुका। कहने लगा, "हाँ, एक बात और है, अगर कुछ करना है तो अभी करो, और दो-चार बरस सर्विस हुई तो बस, खेल खतम।"

दस

डिकी सुबह ज़रा देर से उठा। उस समय उसके साथी यूनिफ़ार्म चढ़ा रहे थे। कुछ लोग तस्मे बाँध रहे थे, कुछ शेव कर रहे थे। नामदेव झाड़ू लगा रहा था। नामदेव ने उसे आज जगाया नहीं था। उसे चाय भी नहीं दी थी। रोज़ की तरह उठते ही वह दाढ़ी बनाने बैठने ही वाला था कि उसका ध्यान उधर कोने में खड़े हवलदार नायर की तरफ़ गया। झट-से उसने चादर सिर पर खिसका ली और आँखें बंद करके फिर लेट गया। इस बार जब वह उठा तो देखा कि सब लोग परेड-ग्राउंड पर जा चुके हैं। उसने नाइट पाजामा चढ़ाया और मेस की तरफ़ चल दिया। मेस-कमांडर गरम-गरम पूड़ियाँ मुँह में ठूँसे खड़ा था। डिकी को देखकर भी अनदेखा कर दिया। डिकी ने अपने मग में चाय उँडेल ली और बैरक में लौट आया। खाट पर बैठे-बैठे वह देर तक चाय के घूंट लेता रहा।

वह बाथरूम से जब लौटा तब तक सभी जवान वापस आ चुके थे। वे लोग ड्रिल-ड्रेस उतारने और हाफ़-पैंट और बनियान पहनने में व्यस्त थे। ग्यारह बजे तक के लिए वक़्त गुजारने का कार्यक्रम बनाने में सब लोग लगे थे। हवलदार नायर हर खाट का मुआइना कर रहा था। "नामदेव, तुम्हारे कंबल की फ़ोल्डिंग ठीक नहीं हैं। और यह किसका बेड है? मास्किटो-नेट क्यों नहीं है? नंबर चार, चारपाई ज़रा-सी आगे खींचो, राईट! नंबर सिक्स, पीछे। गुरुमुख दरवाजे के पास झाड़ू कौन लगायेगा?" हवलदार नायर आदेश दे रहा था। डिकी को सब लोग मानो नज़र-अंदाज़ कर रहे

थे। वह अपनी जगह शांत अकेला बैठा रहा—बड़ी [illegible] की अनुपस्थिति।
आठ बजे। सीटी हुई। सब निश्चल पड़े।

थोड़ी देर बाद हवलदार निरंजन की आवाज सुनायी दी। "सब ठी...साव...धान!" कंपनी को 'सावधान' की पोज़ीशन में खड़ा करके हवलदार निरंजन कुछ कुछ दूरी पर खड़े सूबेदार मनिहार को रिपोर्ट देने के लिए आ रहा होगा। रुकने पर 'साहब' के बूटों की आवाज "साहेब, एक सौ अठारह जवान हाज़िर हैं, सर।" फिर कुछ देर अस्पष्ट-सी बोलने की आवाजें आती रहीं। धीरे-धीरे सब [illegible]। व्यक्ति की दासता समझने का सुभाव बनाने के लिए छोटे-छोटे कमरों की जंजीरें बनायी गयी हैं। सूबेदार मनिहार बैरकों के बाहर का निरीक्षण कर [illegible]। सिंह वाली बैरक के दरवाजे पर पहुँचकर वह एक क्षण के लिए ठिठका और अन्दर आने के बजाय वह सीधे दूसरी ओर चल दिया।

कवच को तह करके सिंह ने अपना बिस्तर ठीक किया और बिस्तर उठाकर पहले बैठ गया। लेकिन दिमाग में उसका मन नहीं लग रहा था। बाहर की आवाजें उसका ध्यान खींचती नहीं थीं। अजब उदास [illegible] माहौल। हर कण में मानो निष्क्रियता तथा असंवेदनशीलता कूट-कूटकर भरी हुई थी। उसने चारों ओर नजर दौड़ायी। सुबह से किसी ने उससे बात नहीं की थी। इन लोगों ने मानो उसे बहिष्कृत कर दिया था। कहीं कुछ इस तरह का कोई आदेश तो नहीं था?

ओह, हैव इट। यू बेगर्स![1]

एक कतार में बिछी खाटें। चीनी दरियाँ, कम्बलों से ढके बदन। [illegible] पर मच्छरदानी की तहें। एक ही साइज, एक-सा डिज़ाइन। कहीं कोई फ़र्क नहीं। पलंग के बीच में हर एक का नम्बर पड़ा हुआ। खाटों के नीचे भूरे रंग की जोड़ियाँ, तस्मेदार जूते। हर चीज अपनी जगह पर। [illegible] एक भी कपड़ा फ़ालतू नहीं। एक भी चीज बेकार नहीं। [illegible] सब। सिर्फ काम का सामान। पीछे वाले का सामान बिलकुल आगे वाले की तरह। परेड ग्राउंड के जवान एक-जैसी कतारों में। एक जैसे। और

1. अरे, छोड़ो इसे—चोर बरबाद करता है [illegible]

यहाँ, मग, मेस-टिन, हैवर-सैक सभी एक क़तार में, एक 'रो' में। दिस यूनिफ़ॉर्मिटी इज सो डिसगस्टिंग ![1] लेकिन हज़ारों लोगों पर नियंत्रण रखने के लिए, उन पर क़ाबू पाने के लिए क्या यही एकमात्र ज़रिया नहीं है? टर्न दीज ह्यूमन बीइंग्ज इन टु मशीन ऐंड रूल ओवर देम पीसफ़ुली।[2] इच्छा होती है, तमाम कंबलों और मच्छरदानियों को किसी कोने में फेंक दे। खाटों को उलट-पुलट कर दे। जूतों को दीवारों के पास फेंक दें। यह सिमिट्री, यह यूनिफ़ॉर्मिटी ! उसे लगा, चारों दिशाओं से उसके शरीर पर भयंकर दबाव डाला जा रहा है। उसका दम घुटने लगा। वह बैठा रहा। उसी तरह अनमना-सा।

नौ बज गये। दस भी बज गये। दफ़्तर से बुलाये जाने के इंतजार में वह बैठा रहा। किताब पढ़ने की कोशिश की, लेकिन मन नहीं लग रहा था। ओ हेल, व्हाई शुड आई केयर? ग्यारह बज गये। उसके सेक्शन के जवान एक-एक कर लौट आये थे, पर उससे बात करने के लिए कोई तैयार नहीं था। मानो उनके लिए उसका अस्तित्व ख़त्म हो चुका था। उसे यक़ीन था कि जब वह उनकी तरफ़ नहीं देख रहा होता है तब वे लोग उसी की तरफ़ देखते हैं। अपनी पीठ पर टिकी हुई उनकी नजरों को वह महसूस करता। कभी अचानक मुड़कर किसी की नजरों को पकड़ लेता। वे लोग उसकी तरफ़ इस तरह देखते जैसे चिड़ियाघर के किसी विचित्र प्राणी को देख रहे हों।

उनकी नजरों में कौन-सा भाव होगा? केवल जिज्ञासा या विस्मय? तिरस्कार या नफ़रत? समझ पाना कठिन था। एक बात निश्चित है, उनकी आंखों में परायेपन का भाव था। सिर्फ़ एक ही दिन में मैं उनके लिए अपरिचित हो गया हूँ। पराया हो गया हूँ। कल तक उनमें से ही एक था। लेकिन आज वे मुझे नकार रहे हैं। या ऐसा तो नहीं है कि मैंने ही उन्हें नकार दिया हो?

स्लीपर पहनकर वह बाहर आ गया। सूबेदार मणियार दफ़्तर से बाहर निकल आया था। उसने डिकी को देखा, और झट-से साइकिल पर

1. यह एक-रूपता कितनी निराशाजनक है !
2. इन इंसानों को मशीनों में बदल दो और उन पर शांतिपूर्वक राज करते रहो।

टांग मारकर घर की ओर चल दिया।

आज न सही, कल या और कभी तो उन्हें मुझ पर चार्ज लगाने ही होंगे। दो दिन हो गये, यूनिट ही में पड़ा आराम कर रहा हूँ। जहाँ जी चाहता है घूमता रहता हूँ। परेड के लिए हाजिर नहीं रहता। ज्यादा दिन तक वे इस स्थिति को नजरअंदाज नहीं कर सकते, क्योंकि इसमें पूरे यूनिट की डिसिप्लिन खतरे में पड़ सकती है। चावलों के कंकड़ की तरह वे मुझे निकाल फेंकेंगे, मैं जानता हूँ। लेकिन फिर इतना विलंब क्यों हो रहा है? संभवतः आज चार्ज-शीट बनकर तैयार होगी। कल मुझे कमांडिंग अफ़सर के सामने पेश किया जायेगा। अपराधों की सूची मुझे पढ़कर सुनायी जायेगी। नौकरी के चार साल के इतिहास का पुनर्मूल्यांकन होगा। आज के संदर्भ में उसे नया अर्थ दिया जायेगा। उसके बाद, तीन अफ़सरों का एक पैनेल नियुक्त किया जायेगा। उसमें मेरी पैरवी करने वाला एक अफसर जरूर रखा जायेगा। जी हाँ, हर बात क़ानून के मुताबिक होनी चाहिए। पैनेल अपना फ़ैसला सुनायेगा—कोर्ट-मार्शल करने का फ़ैसला। और आख़िर में कोर्ट-मार्शल का समारोह सपन्न होगा।

रेजिमेंट के सभी जवान, जे० सी० ओ०, अफ़सर आदि एक जगह जमा होंगे। वहाँ एक बार फिर मेरे अपराधों की सूची पढ़ी जायेगी। फिर एक बार पैनेल का फ़ैसला सुनाया जायेगा। कमांडिंग अफ़सर मेरे कंधे पर लगा कोर का बैज उतार लेगा। बेल्ट उतार ली जायेगी। तब मैं सिपाही नहीं रहूँगा। फिर से सिविलियन बन जाऊँगा। उस वक़्त मेरी गिरफ़्तारी के लिए सिविल जेल के अधिकारियों के साथ पुलिस-वैन तैयार खड़ी होगी। और फिर तीन महीनों की सिविल जेल। लेकिन यह सारा नाटक किसके लिए? उनके लिए ही न, जो अब भी इस चौखट के अंदर घुट रहे हैं? हो सकता है, कहीं कोई और भी इसी रास्ते को अपनी मुक्ति का ज़रिया न बना रहा हो? बाग़ी को गोली दाग दो। उसकी लाश कटहरे के दरवाज़े पर लटका दो। क्यों? दहशत पैदा करने के लिए ही न? लेकिन सिर्फ़ बेल्ट उतार लेने से क्या मैं सिविलियन बन जाऊँगा? इतनी-सी बात से क्या चार साल की अवधि मिट पायेगी?

इस मामले को अब ख़त्म करना होगा। 'हरी अप यू रास्कल्स!'

ज़िंदगी का यह पन्ना उलट देना होगा। बिलकुल इसी वक़्त। समय
गति धीमी पड़ गयी है, लेकिन मैं मजबूर हूँ। पूरा नाटक मुझे खेलना
होगा। उनके बनाये हुए नियमों के मुताबिक़। उनकी शर्तों के नियंत्रण
मैंने पहला क़दम उठा लिया है। अब मेरे हाथ सिर्फ़ इंतज़ार करना
है। वेट, वाच, ऐन्ड लिसेन।[1]

लाइब्रेरी-इंचार्ज हवलदार बच्चनसिंह ने मुसकराते हुए डिकी का स्वा
किया। लाइब्रेरी में ढेरों अँग्रेज़ी की किताबें -पड़ी थीं। उन किताबों के
गिने चाहने वालों में मेरा एक नाम और जुड़ रहा था। इसलिए हवल
बच्चन ख़ुश था। सालाना स्टॉक चेकिंग भी तो थी। डिकी ने बच्चन
के काम में हाथ बँटाने की ख़्वाहिश ज़ाहिर की थी। बच्चन के ख़ुश होने
यह भी एक कारण था। बच्चनसिंह बड़ा गप्पबाज़ था। उसके साथ ग
लड़ाने से डिकी का दिमाग़ी तनाव कुछ ढीला पड़ गया। हाल ही में यू
में एक एक्सिडेन्ट हो चुका था। दरवाज़े के पास खड़ी थ्री-टनर पीछे
आने वाली ट्रक से टकरा गयी थी। ट्रक का कोई ख़ास नुक़सान नहीं हु
था, लेकिन सिग्नलमैन नायडू ख़त्म हो गया था। वह छुट्टी पर जा
था। रेजिमेंट के मुख्य गेट के पास खड़ा स्टेशन की तरफ़ जाने वाली कि
गाड़ी का इंतज़ार कर रहा था। ड्राइवर को उसने टोका तो पता चला
ट्रक स्टेशन की ही तरफ़ जा रहा है। उसने अपना सामान ट्रक में चढ़ा दि
और पीछे की तरफ़ से चढ़ ही रहा था कि यह घटना हुई। केवल, अ
घर जाने के लिए बनाया गया रेल का वारंट उसकी जेब में था। लेकि
अब नायडू किसी और मंज़िल को चला जा रहा था। बच्चन और डि
काफ़ी देर तक बातें करते रहे। डिकी को भी कुछ काम नहीं था। जब
लौटा तब खाने का वक़्त हो चुका था। घंटी बज चुकी थी। तश्तरी अ
मग लेकर वह मेस की तरफ़ चल दिया।

कोने वाली टेबिल पर वह बैठा था। बग़ल की सीट ख़ाली थी। प्र
आया और उस सीट पर बैठ गया। हवलदार निरंजन खड़ा मेस-कम
से गपशप कर रहा था। हवलदार जब बाहर चला गया तो प्रबोध

1. प्रतीक्षा करो, देखो और सुनो !

के पास आया।

"डिकी, तुमने तो हंगामा कर दिया। कंपनी-ऑफिस मे तमाम दिन चर्चा होती रही। कोई कुछ कहता था, और कोई कुछ। मेजर मोहता! दैट ब्लडी भद्र लोग इज़ रिअली कनफ़्यूज़्ड। लगता है, वह तुम्हें इतनी जल्दी परेशान नहीं करेगा। अब तक तो चार्ज-शीट भी तैयार नही हुई है।"

प्रबोध बुड़बुड़ा रहा था। डिकी सिर्फ गरदन हिला रहा था। बोलते-बोलते वह एकदम रुक गया और गंभीर स्वर मे उसने डिकी से पूछा, "डिकी, तुम किसी पार्टी के मेम्बर हो क्या?"

"प्रबोध, डोन्ट टॉक रबिश!"

वह दिन भी गुज़र गया। हवलदार नायर इन दिनो एक बार भी उससे नही मिला था। हवलदार निरंजन ने भी उसकी तरफ ध्यान नही दिया था। शाम के वक्त सिविल ड्रेस में डिकी टहलने के लिए निकला था। कैम्प के दरवाजे पर संतरी ने उसे घूरकर देखा, लेकिन रोका नही। डिकी अब उस लंबी सड़क पर था। चिकना, चौड़ा, लंबा रास्ता। किनारे की आलीशान कोठियो को देखता हुआ चला जा रहा था। नुक्कड़ के पेट्रोल-पंप के पास वाले एक पेड़ पर सैकड़ों छोटी-छोटी रंग-बिरंगी बत्तियाँ जल रही थी। सड़क शांत थी। कभी एकाध कार गुज़र जाती। रुककर उसने पेड़ की तरफ देखा। घने अँधेरे में पेड़ जगमगा रहा था, मानो रंग-बिरंगी बहार फूट पड़ी थी। दाहिनी तरफ़, कुछ पीछे की ओर, तीन ऊँची-ऊँची इमारतें खड़ी थी। उधर से दो-तीन युवक बातें करते इधर आते दिखायी दिये। लेकिन बिना रुके वे लोग जल्दी-जल्दी आगे निकल गये। पुलिस का एक जवान उसके पीछे चल रहा था। बायी तरफ वाले शानदार बँगले के अहाते में गार्डन-चेअर्स पर दो पुरुष और दो महिलाएँ बैठे आपस मे बातें कर रहे थे। एक महिला खुलकर हँसी थी। हँसी बड़ी मधुर थी। सफेद वर्दी मे एक नौकर ट्रे लेकर आया था। हँसने वाली महिला ने हाथ का पंखा एक तरफ करके ट्रे में से

बोतल उठायी।

सड़क पर एक आदमी आ रहा था। उससे कन्नी काटने के लिए डिकी झट से एक तरफ़ हो गया। वह आदमी तेज़ क़दमों से चल रहा था और माथे का पसीना पोंछता जा रहा था। उसकी चाल में जोश नहीं था। वह बहुत थका हुआ लग रहा था। डिकी ने फिर एक बार हँसी की आवाज़ सुनी। आवाज़ में हिलोरें थीं, लेकिन बनावटीपन ज़रूर था। रास्ता दाहिनी ओर मुड़ा। एक विशाल उद्यान। उद्यान के बीचोंबीच सफ़ेद रंग की आलीशान इमारत। इमारत की बनावट राजमहलों जैसी थी। शायद पिछली शताब्दी में कभी बनी होगी। पार्क के फाटक बंद थे। उस शांत तथा निःशब्द परिवेश में वास्तुकला की सुंदरता और बढ़ गयी थी। चार-दीवारी के सहारे बँगले के नौकर ने अपनी झोंपड़ी खड़ी की थी। बाहर एक औरत लंबे, चिकने पत्थर पर कुछ पीस रही थी। एक बड़े पेट वाला मरियल-सा बच्चा पास ही बैठा रो रहा था। औरत अपने काम में मग्न थी। दो और बच्चे नजदीक ही अँधेरे में कुछ खटर-पटर कर रहे थे। ग्राउंड की हरियाली पर चित लेटा एक आदमी आसमान के अंधकार को ताक रहा था। बच्चा अभी तक रो रहा था। डिकी फ़ुटपाथ पर खड़ा उस औरत, बच्चे और बगल की राजमहल जैसी शानदार सफ़ेद इमारत को एकटक देख रहा था।

फाटक खोलकर वह अंदर दाख़िल हुआ और पेड़ की आड़ से देखता रहा। वे चारों अब भी गार्डन-चेअर्स पर बैठे थे। दोनों महिलाएँ आपस में बातें कर रही थीं। डिकी प्रति क्षण इंतज़ार करता रहा। उसे उस महिला की मधुर हँसी सुननी थी...बड़ी आतुरता से कान लगाये वह उनकी बात-चीत सुनने की कोशिश करता रहा।

बोलते-बोलते उस महिला ने अपना सिर कुर्सी की पीठ से टिका दिया। अब वह शायद हँस पड़ेगी...डिकी दो क़दम आगे बढ़ा। ज्योंही वह आगे खिसका उसे विस्मय का एक आघात लगा। मधुर हास्य की जगह उसके कानों में करुण सिसकियों की आवाज़ आने लगी। गार्डन-चेअर पर अब झोंपड़ी वाली औरत बैठी थी। वह ज्योंही हँसने का प्रयत्न करती उसके मुंह से सिसकी निकलती। डिकी और आगे खिसका। उसने सुना,

"टेक हर अवे, टेक दैट फ़ूल अवे। हू इज शी ! आई से, हू इज शी ?"[1] हड़बड़ाकर उसने कुर्सी पर बैठे पुरुष की तरफ़ देखा। मेजर मोहता इधर ही देख रहा था। वह पीछे मुड़ा और बेतहाशा दौड़ने लगा। दौड़ते हुए उसका खयाल अपने ड्रेस की तरफ गया और वह रुक गया। उसने सफ़ेद ड्रेस पहन रखी थी।

उसकी आँख खुली। कैसा विचित्र सपना था ! माथे का पसीना पोंछते हुए उसने करवट ली। और फिर आँखें बंद कर लीं। कमर झुकाये वह आगे बढ़ता जा रहा था। उस गुफा में...गहरे...और गहरे, भीतर...और भीतर। पीछा करने वाली रोशनी धीरे-धीरे लुप्त हो रही थी। कंधे और बाँहें गुफा की छत से टकराकर छिले जा रहे थे। गुफा धीरे-धीरे सँकरी होती जा रही थी। झुककर आगे बढ़ना भी अब मुश्किल हो रहा था। भीतर की गर्म हवा घुटन पैदा कर रही थी। क्षण-भर के लिए दीवार से पीठ टिकाकर वह सुस्ताने लगा। सामने भयंकर अंधकार। आगे बढ़ पाना असंभव था। दायें, बायें और ऊपर से बाहर निकली हुई पत्थर की नोकें अस्पष्ट दिखायी दे रही थीं। वह पेट के बल औंधा लेट गया। घुटनों और कुहनियों के बल जल्दी-जल्दी आगे सरकने लगा। उसके घुटने नुकीले कंकड़ों में छिल जा रहे थे। उनमें खरोंच आ रहे थे। कुहनियों से खून निकल रहा था। पसीने की बूँदें आँखों में उतर रही थीं। उसका गला सूख गया था। वह बेहद थक गया था। आँतें जैसे सिमटकर पेट में एक जगह जमा हो गयी थीं। लेकिन वह लगातार आगे बढ़ रहा था। उसे पता था, एक बार रुका कि फिर हिलना-डुलना मुमकिन नहीं होगा। और इसलिए फ़ासले की चिंता छोड़कर वह आगे की तरफ रेंगता जा रहा था। घने अंधकार को चीरता हुआ आगे बढ़ रहा था। उसे पता था, किसी भी वक़्त उसका सिर सँकरी होती हुई दीवार से टकरा सकता है। उसे महसूस हुआ कि उसकी रफ़्तार धीमी पड़ गयी है। पीठ तनिक ऊँची उठाकर, टाँगों के बीच गरदन मोड़कर उसने पीछे की तरफ देखने की कोशिश की। घना अंधकार ! उसकी रीढ़ छत की खुरदरी सतह से टकरायी। वह धड़ाम से, पेट के बल

1. "इसे, इस मूर्ख को यहाँ से ले जाओ ! मैं पूछता हूँ, कौन है यह औरत ?"

गिर पड़ा। उसे लगा जैसे टाँगें पेट से चिपक गयी हैं। और अंधकार के कोटर में कहीं वह अधर में लटक तो नहीं रहा है ?

और फिर वही आवाज़ एक बार और सुनायी पड़ी, मानो दूर पर बजती हुई रेलगाड़ी की सीटी, आवाज बड़ी मधुर लग रही थी। लेकिन उसमें कुछ भयावह ज़रूर था। उसमें हिलोरें नहीं थीं। एक क्रूर नियमितता से क्रमशः तीव्र और कर्कश होती हुई आवाज़ थी। वह आगे बढ़ रहा था। यकायक उसका शरीर, अंधकार और गुफ़ा—तीनों एक साथ सीटी की लय पर काँपने लगे। उसे लगा, किसी भी क्षण उसका मस्तिष्क, बिल्लूरी शीशे की तरह टूटकर टुकड़े-टुकड़े हो जायेगा। आवाज़ और तेज़ हो रही थी। किसी अंधे पागल जीव की तरह वह टकराता-उठता-गिरता-काँपता आगे बढ़ रहा था। शरीर और दिमाग़ का कण-कण कंपित था। और यकायक वह रुका। अंधकार के अज्ञात शून्य में उसने अपना हाथ आगे बढ़ाया। उसे पत्थर का कड़ा स्पर्श महसूस हुआ। घुटनों को पेट से चिपकाकर उसने ऊपर की तरफ़ हाथ से टटोला। 'सो, दिस इज़ ऐन ऐन्ड !' उसे शुरू से यक़ीन था कि वही 'अंत' है। इम्पासे। गतिरोध। क़ैद। उसने आँखें मींच लीं। बाँहों पर सिर टिकाकर टाँगें सीधी कर लीं।...शांति।

और यकायक उसके समूचे अस्तित्व में एक प्रकार का गहरा भय समा गया। वह चौंक पड़ा और उसने उठने की कोशिश की। नुकीले पत्थरों से उसकी पीठ और बाँहें छिल गयी थीं। छाती और पेट पर से गर्म ख़ून फिसलने लगा था। मस्तिष्क में भयंकर विस्फोट चल रहे थे। और पहली बार, बिलकुल पहली बार चीख़ मारने की कोशिश में उसके होंठ खुले थे।

उसकी नींद टूट गयी। पूरा शरीर पसीने से तर था। हथेलियाँ और तलुवे ठंडे पड़ गये थे और गला सूख रहा था। कुछ क्षण वह अपनी आँखों को मिचमिचाता रहा, ताकि साफ़ दिखायी देने लगे। धीरे-धीरे बैरक की दीवारें, छत, डोरी पर लटके कपड़े, आदि सब चीज़ें स्पष्ट होने लगीं। वह उठकर बैठ गया। सपने का आशय स्पष्ट था। सो, ही हैज़ बिकम अ कॉवर्ड

रोज़ की तरह हवलदार नायर सुवह साढ़े चार वजे जाग गया था। उसने वत्ती जलायी। एक-एक करके सभी जवान जागने लगे थे और अपने-अपने कामों में लग रहे थे। चलते-चलते उनमें से प्रत्येक डिकी की तरफ़ झाँक लेता था, लेकिन किसी ने उसके साथ वात नहीं की थी। उनके इस रवैये से डिकी वेचैन हो उठा था, मानो वह अव उनमें से एक नहीं था। उसने पैंड उठाया और लिखने वैठ गया—"प्रिय एन्ड्या...!" उसे पता था, वह कभी उस ख़त को पोस्ट नहीं करेगा। फिर भी लिखते वक़्त प्रत्येक शव्द सोच-समझकर लिख रहा था। प्रत्येक वाक्य को अर्थपूर्ण वनाने की कोशिश कर रहा था।

प्रिय एन्डया...!

आय ऐम ऑन द वर्ज ऑफ़ इनसेनिटी।[1] इधर की ताज़ा घटनाओं पर जव सोचने वैठता हूँ तो लगता है, उन्हें इतना महत्व क्यों दिया जाये? कुछ हालत ऐसी हो गयी है कि छोटी-छोटी वारदातें इधर परेशान करने लगी हैं। मुझे डर लग रहा है कि कहीं मैं ज्ञान और अज्ञान, सेनिटी और इनसेनिटी की सीमा-रेखा पर तो नहीं खड़ा हूँ। हो सकता है, इन घटनाओं का महत्व केवल सामयिक हो। समय वीतने के साथ ये घटनाएँ, हो सकता है, सामान्य लगें। लेकिन आज मैं इन्हीं घटनाओं के संदर्भ में अपने अस्तित्व का अर्थ ढूंढ रहा हूँ, अपने अंदर वैठे अजनवी 'मैं' को देखकर मैं खुद चकरा गया हूँ, सहम गया हूँ। हो सकता है, मैं वहुत आत्मकेन्द्रित हो गया हूँ। पिछले पांच वरसों से इस निर्जीव तथा विकराल यंत्रणा में फँसा मैं एक निर्जीव पुर्ज़े की तरह घूमता रहा हूँ। निरंतर अपनी आकांक्षाओं के ख़िलाफ़ चलते रहने के लिए विवश किया गया हूँ। इससे दिमाग़ पर एक तनाव वना रहा है। इस तनाव का ही नतीजा है कि मेरी हालत दिनोंदिन कमजोर और खस्ता होती जा रही है। इधर मेरी कल्पना-शक्ति अप्राकृतिक मोड़ लेती हुई विकृत रूप में भड़क उठी है। दिमाग़ हाइपर-सेंसिटिव हो गया है। स्थितियों को तटस्थता से ग्रहण करने का साहस शायद ख़त्म हो चुका है।

1. मैं पागलपन की सीमा-रेखा के निकट पहुंच रहा हूं।

कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि मैं नर्वस ब्रेकडाउन का शिकार हो चुका हूँ।

पिछले पाँच बरसों से मानो मैं घूमर खेलता रहा हूँ। मन मारकर घूमता रहा हूँ। चक्कर काटता रहा हूँ। शुरू से मन करता कि कहीं रुक जाऊँ, लेकिन रुक नहीं सका। उलटे अपने-आपसे ज़िद करके घूमता रहा, घूमता रहा। गोल-गोल, अपने चारों ओर। जब तक गति थी, मुझ पर अपना काबू था। अब मैं रुकने की कोशिश कर रहा हूँ, पैरों की गति धीमी करना चाहता हूँ, लेकिन अब परिवेश ही घूम रहा है। सारा शरीर झोंके खा रहा है। मस्तिष्क घूम रहा है। उचित और अनुचित में फ़र्क मैं नहीं कर पा रहा हूँ। रुक जाना उचित है या अनुचित, कुछ समझ में नहीं आता। सत्य क्या है? मैं स्थिर हूँ या संसार ही घूम रहा है?...गर-गर ऽऽ! या संसार स्थिर है और मैं ही घूम रहा हूँ?

इसी दुनिया ने मुझे पाला-पोसा, बड़ा किया। इसी ने मुझे 'मेरा आपा' दिया। मेरे 'अहं' का पोषण किया। उसे पुष्ट किया। उसका फूलना-फलना बड़े कुतूहल से देखा। इसी दुनिया ने मुझे अपने विशिष्ट 'मैं' को जीवित रखने और उसकी शक्ति बढ़ाने के साधन दिये। इसने ही तो मुझे सिखाया था न? आई ऐम यूनीक। औरों के 'मैं' को पैरों तले रौंदकर, उन्हें कुचल-कर, उनकी लाशों के ऊपर सवार हो जाने से अपने 'मैं' की सुरक्षा होती है। इस दुनिया ने मुझे 'मैं' की सुरक्षा का अभिमान दिया।

और आज वही दुनिया मुझसे कह रही है, 'यू आर अ नॉन-एन्टिटी।' तुम सिर्फ़ एक गिनती हो। तुम डिकी नहीं हो, एक यंत्र हो। एक [illegible]। इस विकराल यंत्र का एक छोटा-सा पुर्ज़ा। 'फ़ायर, फ़ायर' का ऑर्डर सुनते ही तेरी उँगलियाँ बंदूक के घोड़े पर होंगी, तेरी बंदूक की [illegible] सामने दिखायी पड़ने वाली हिलती हुई आकृति की आँतों और [illegible] चीरकर पार निकल जाना चाहेगी। दाँतों को भींचकर, [illegible] तुम भयंकर आवेग से अपनी संगीन सामने वाले व्यक्ति के [illegible] और फिर संगीन को पीछे खींचकर, लाल-नीली आँतें बाहर [illegible] तुम्हें यह सोचने की कोई ज़रूरत नहीं कि तुम किसे [illegible] मार रहे हो? बल्कि 'न सोचना' ही तुम्हारा धर्म है [illegible]

क्रेज़ी। अँवर वर्ल्ड इज़ क्रेज़ी। नॉट टु क्वेश्चन व्हॉट ऐन्ड ह्वाई, वट टु किल ऑर डाई !

तुझे पता है, मैं न तो सेन्टीमेंटल हूँ और न आइडियलिस्ट। आई डोन्ट माइन्ड किलिंग।[1] मानव के अस्तित्व की सुरक्षा के लिए आदमी की वलि चढ़ाना कोई बुरी वात नहीं है। लेकिन अपने अस्तित्व को इन वुद्धिहीन पिशाचों के हवाले कर देने के लिए मैं तैयार नहीं हूँ, क़तई नहीं।

मुझे पता है, यह संघर्ष है, जंग है। अपने ही पैदा किये हुए वंधनों के खिलाफ़ अपनी जंग। इस मनोवृत्ति को तोड़ डालने की जंग। मुझमें ताक़त है? स्थापित मूल्यों के मुखौटे उतार फेंकने की क्या सचमुच मुझमें शक्ति है? यह संघर्ष कुछ दिनों या वरसों तक ही सीमित नहीं है। यह लड़ाई कभी न ख़त्म होने वाली लड़ाई है। यह निरंतर है। एक खोल से मुक्ति पाकर मैं किसी दूसरे खोल में फँस जाऊँगा। हो सकता है, दूसरा खोल ज्यादा विशाल और भव्य होगा, लेकिन वहाँ भी सीमाओं का वंधन तो होगा ही। ऐम आई टॉकिंग मिस्टिसिज्म ?

आने वाला कल मेरी ज़िन्दगी में अंतर-वाह्य परिवर्तन की शुरुआत होगी। मुझे यक़ीन है, मैं इसका मुक़ावला करता हुआ वाहर निकल आऊँगा। लेकिन...लेकिन फिर भी मुझे शक है, क्या वास्तव में मैं ज्ञान और अज्ञान की सीमा-रेखा पर खड़ा हूँ, या मैं इन सीमाओं को लाँघ गया हूँ? हैव आई ऑलरेडी क्रॉस्ड ओवर ? आई डोन्ट नो, आई डोन्ट नो।

---

1. न मैं भावुक हूँ, न ही आदर्शवादी। मुझे किसी को मारने में भी कोई झिझक नहीं होती।

ग्यारह

उस दिन सुबह दस बजे तक वह बैरक में बैठा रहा। मेजर मोहता के संभाव्य सवालों और अपने जवाबों का खाका बनाता रहा, और ऑफिस में बुलाये जाने की राह देखता रहा। पैनेल के सामने एक वक्तव्य देने की इच्छा थी, उसको। उसने अब तक कुछ काल्पनिक सवालों और उनके जवाबों को मन-ही-मन दोहराया था। कभी-कभी तो साक्षात्कार की कल्पना करके वह बुदबुदाया भी था। अपनी दलीलों में अपेक्षित परिवर्तन करके देखे। अब वह ज्यादा सोचना नहीं चाहता था। इसलिए उसने किताब उठा ली और पढ़ने की कोशिश करने लगा। पर कोई फ़ायदा नहीं हुआ। उसने अपनी पुरानी डायरी निकाल ली और पुरानी स्मृतियों में अपने-आपको रमा लेने की कोशिश की। लेकिन अब तक तो पुरानी यादें बिलकुल परायी हो चुकी थीं। अब तो वह दूसरे ही व्यक्तित्व वाला 'डिकी' था। एक महीने से सुनीता का कोई पत्र नहीं आया था। वह उदास था। उसे ख़याल आया, उसने इधर का अपना नया पता सुनीता को नहीं लिखा ...
सुनीता की लगभग सभी चिट्ठियाँ उसने फाड़ ...
हुई एक-दो चिट्ठियों को आज पढ़ने की उसने को...
वह बँगला लिपि अच्छी तरह समझ नहीं सकता ...
जोड़-जोड़कर पढ़ने में उसे कठिनाई हो रही थी। ...
लग रहा था। उसने वर्तमान में दूर भागने की को...
पैनेल, कोर्ट-मार्शल, सिविल जेल—ये सब उसके ...

रहे थे।

वह उठा और बैरक के दरवाज़े के पास आकर खड़ा हो गया। यूनिट रोज़ की तरह व्यस्त था। खुरपी वाले जवान बाथरूम के पास पालथी मारे बैठे थे और गपशप कर रहे थे। स्टोर के पास दो जवान फावड़ा लिये खड़े थे। कुछ देर वह वहीं चक्कर काटता रहा। उसकी ओर किसी का ध्यान नहीं था। दफ़्तर से जाधव बाहर निकला। डिकी उसके पीछे-पीछे कुछ क़दम हो लिया। जाधव से उसने पूछा, "क्यों जाधव, मेरे लिए कोई ऑर्डर?"

"कुछ नहीं।"

डिकी सीधे लाइब्रेरी की तरफ़ चल दिया। हवलदार बच्चनसिंह ने उसका स्वागत किया, लेकिन इस बार उसमें वह अपनापन नहीं था। एक तरह का बल्कि उलटे कुछ दुराव ही था। कुछ देर इधर-उधर की बातें करने के बाद, वह मतलब की बात पर आया—

"डिकी, तुम फ़िकर मत करो। ये लोग जब तक किसी दूसरे यूनिट में तुम्हारी पोस्टिंग नहीं करते, आराम से यहीं पड़े रहो। तुम्हें कोई चार्ज-शीट पर नहीं रखेगा। इस रेजिमेंट में इस साल और कोई कोर्ट-मार्शल नहीं होगा। पिछले दो महीनों में तीन कोर्ट-मार्शल हो चुके हैं। एरिया-कमांडर ने अपने कमांडिंग अफ़सर से कहा है, इस साल और कोई कोर्ट-मार्शल नहीं चाहता हूँ।"

डिकी लाइब्रेरी से लौट आया। क़िस्सा जल्द ख़त्म होने वाला नहीं है। दूसरी जगह पोस्टिंग होने से पहले कुछ करना होगा। वे लोग उस पर चार्ज लगा ही नहीं सकते, क्योंकि वह उनकी 'अँथारिटी' को ही चैलेंज करने जा रहा था। इसलिए उनके पास कोर्ट-मार्शल के अतिरिक्त और कोई चारा नहीं था। वह आराम नहीं चाहता था, बेकार बैठकर वक़्त गुज़ारना या काम-चोरी उसे पसंद नही थी। कोई नया रास्ता ढूंढ़ना ही होगा।

'कॉल मी इनसेन, ऐन्ड लेट भी गो।'[1] मनश्चिकित्सालय के वेटिंगरूम में वह अकेला बैठा था। यूनिट मेडिकल अफ़सर का दिया हुआ पत्र उसने अदर डॉक्टर के पास भेज दिया था, और अब डॉक्टर का इंतजार कर रहा था।

पिछले डेढ़ महीने से भयंकर मानसिक कष्ट पहुँचाने के बाद आखिर उसे यहाँ भेजा गया था। यूनिट मेडिकल अफसर ने उसका केस ऊपर 'रेफर' नहीं किया था। वह इसे टालता रहा था। उसने डिकी को दो बार लौटा दिया था। फिर भी डिकी ने अफसर का पीछा नहीं छोड़ा था। मेडिकल अफ़सर ने डांट-फटकार कर उसे भगाने की कोशिश की थी, लेकिन डिकी टस-से-मस नहीं हुआ। इसीलिए आज वह यहाँ था। इस बीच मानसिक पीड़ाओं को सहते रहने के कारण वह जैसे टूट चुका था। चेहरे पर उसके स्पष्ट चिह्न दिखायी दे रहे थे। खून की कमी के कारण चेहरा सफेद पड़ गया था। उसे लग रहा था, वह काफी बूढ़ा हो गया है। पिछले डेढ़ महीने से यहाँ उसका रहना, न रहने के बराबर था। मेजर मोहता, कंपनी-हवलदार निरंजन और चंद अफसरों ने उसे पूरी तरह नज़रअंदाज़ कर रखा था। उसके साथियों ने उसे लगभग बहिष्कृत कर दिया था। अपना धैर्य बनाये रखने की कोशिश में वह उन लोगों से और दूर होता जा रहा था। अब वह थक चुका था। बची-खुची शक्ति बटोरकर उसे अब इस आख़िरी सीढ़ी को पार करना था।

उसके सामने, छोटी-सी गोल मेज़ पर अखबार और चंद पत्रिकाएँ पड़ी थीं। कोने में रेडियो रखा था। फूलदान में ताज़े फूल, दीवार पर कुछ कैलेंडर। कमरे का हुलिया लिविंग रूम की तरह खुशगवार था। दीवारें हलके नीले रंग से पुती थीं। कमरे का माहौल कुछ इस तरह का था कि दाखिल होने वाला व्यक्ति खुद को रिलैक्स महसूस करे। लेकिन डिकी रिलैक्स नहीं होना चाहता था। उसने अपनी हथेलियाँ देखीं। पसीना चमक रहा था, उसके हाथ काँप रहे थे।

लोगों की आँखों में धूल झोंकने के लिए कहीं मैं नाटक तो नहीं कर

1. मुझे पागल घोषित करके मेरी छुट्टी कर दो।

इज़ ही रियली मैड ?[1]

"हैलो डिकी ..प्लीज़, सिट डाउन।"

डिकी मुडा। उमकी ही उम्र का एक युवक सोफे के पास खड़ा था। उसकी पैंट और शर्ट की मैचिंग डिकी को बहुत पसंद आयी। भरा-भरा शरीर, चौडा रोबीला माथा, कुछ घुंघराले बाल, मुख पर कांति। डिकी धीरे-धीरे आगे बढ़ा।

नाऊ इज़ द टाईम। अब हर कदम बड़े ध्यान से और सोच-समझकर बढ़ाना होगा। स्थिर और शात दिखायी देने वाली उसकी आँखें अब मेरी एक-एक हरकत को नोट करती रहेंगी। और आँखों के पीछे का मस्तिष्क उनके अर्थ लगाता रहेगा। कहीं ऐसा तो नहीं है कि यह सब मेरी अपनी कल्पना का खेल हो? एक झूठी उम्मीद! यह दिमाग़ का डॉक्टर भी तो इसी यत्र का एक हिस्सा है! अभी यहाँ आने-जाने, या शायद उसके पहले ही उसने मेरे केस का फैसला सोच लिया होगा।

डॉक्टर उसकी बगल में बैठ गया। डिकी की तरफ देखकर पहले तो वह खुलकर हँसा। डिकी को उसका हँसना अच्छा लगा। यह आदमी इतनी मासूम हँसी कैसे हँस सकता है? डॉक्टर ने अपना हाथ उसके कंधे प रखा।

"प्लीज़ मेक योरसेल्फ ऐट होम—आराम से बैठो। मैं समझता भूमिका बाँधने की कोई ज़रूरत नहीं। फिर भी, यहाँ हम दोस्त हैं। मैं तो अफसर हूँ और न तुम ओ० आर०। मैं डॉक्टर नहीं हूँ और न पेशंट हो। हम दोनों ने बहुत दुनिया देखी है और 'मैच्योर' व्यक्ति हैं सकता है, तुम्हारा अनुभव मेरे मुकाबले कुछ ज्यादा ही होगा। हमें बातों को समझ लेना है। उनकी तलाश करनी है। तुम्हारे ये जो हैं, बकती हैं। वास्तव में, दे आर ओनली सिम्पटम्स। नॉट द डिसी लेट अस ट्राई टु फ़ाइंड आउट, व्हॉट इज रॉंग ऐंड व्हेयर इट इज जिस बात का पता नहीं है, उसे मैं जान पाऊँगा, सो बात नहीं।

---

1. क्या यह वाकई पागल हो गया है?
2. ये केवल लक्षण हैं—बीमारी नहीं। अत हमें यह पता लगाना चा
   है ?

कोई जादू नहीं। रास्ता तुम्हें ही तय करना है। मैं सिर्फ़ तुम्हारी मदद कर सकता हूँ।" डॉक्टर बोलता गया।

"हमें समस्या की जड़ तक पहुँचना है, बिलकुल तह तक। दीवार में अगर दरारें पड़ी हों तो उन्हें पोत लेने-भर से काम नहीं चलेगा। अगर दीवार की नींव कमज़ोर हो गयी हो, नीचे सिर्फ़ रेत ही भरी हो, और समूची दीवार ही कहीं धँसती जा रही हो तो, ऊपर की मरम्मत से क्या लाभ ? हाँ, दोष निश्चित रूप से नींव में ही है। इसका यक़ीन होना ज़रूरी है।"

"जी हाँ ! और यक़ीन हो जाये, तो दीवार को जड़ से खोद दिया जाना चाहिए !" डिकी ने कहा। "बिलकुल सही है। और नये सिरे से दूसरी दीवार खड़ी की जानी चाहिए," डॉक्टर धीमे-से मुसकराया। उसकी मशरूमी आँखें चमक रही थीं। आवाज़ में लयदार उतार-चढ़ाव था। वह बोले चला जा रहा था। और शब्दों की लय के साथ डिकी की बाँहों पर थपकी लगाता जाता था। "मैं तुम्हारे विचारों को पढ़ नहीं सकता। तुम बोलते चले जाओ, किसी भी विषय पर—बचपन, माता-पिता, तुम्हारा काम, तुम्हारा घर, तुम्हारे सपने...!"

ओ ! दिस इडियट इज़ ट्राइंग टु हिप्नोटाईज़् मी ![1] डिकी ने सोचा कि कोई ऐसी पागलों जैसी हरकत करे और डॉक्टर को आश्चर्य का धक्का दे कि उसकी यह कृत्रिम सहजता ओर स्वाभाविकता एक झटके के साथ ख़त्म हो जाये। स्टुपिड ! ही इज़ पिटीइंग मी ![2] मुझे तुम्हारी मित्रता की और हमदर्दी की कोई ज़रूरत नहीं, दोस्त। मैं तो पहले ही से फ़ैसला करके यहाँ आया हूँ...।

इन ज़ंजीरों के बंधन तोड़कर मुझे ऊँची उड़ान भरनी है। पंख फड़-फड़ाकर ऊँची उड़ान भरने वाला हूँ मैं। फैले हुए क्षितिज को अपना लक्ष्य बनाकर ऊँची उड़ान भरने वाला हूँ मैं। अज्ञानी हो तुम। अतीत के लगातार बढ़ते हुए बोझ को अपने कंधों पर ढोये चल रहे हो तुम। शताब्दियों का बोझ। लम्बे इतिहास के इस बोझ से तुम बुरी तरह झुक गये हो। तुम्हारी

1. यह मूर्ख मुझे सम्मोहित करने की कोशिश कर रहा है !
2. मूर्ख, मेरे प्रति दया-भाव दिखा रहा है !

नजरें झुक गयी हैं। तुम सिर्फ नीचे की जमीन का टुकड़ा देख पाते हो। वही तुम्हारा विश्व है और वही क्षितिज।

मेरा सब-कुछ छीन लिया तुमने...सब-कुछ लूट लिया और खुद अपनी पीठ पर उसे लाद लिया। तुम्हें लगा कि तुम अपनी शक्ति बढ़ा रहे हो; इस भ्रम मे तुम अपनी पीठ का बोझ बढ़ाते रहे, जिससे और ज्यादा झुक गये। मुझे तुमने पूरी तरह नगा कर दिया। लेकिन इसी वजह से मेरी *गरदन तन गयी है। रीढ़ पूरी तरह सीधी हो गयी है।* क्षितिज व्यापक हो चुका है। मेरा अतीत, मेरी स्मृतियां, मेरी यादें—मुझे तुमने इस बोझ से मुक्त कर दिया है !

डिकी का ध्यान डॉक्टर की तरफ गया। डॉक्टर उसी को एक टक घूर रहा था। उसके हाथ में कलम था। सामने डायरी खुली रखी थी। डिकी को लगा कि कही वह अब तक ज़ोर-जोर से बड़बड़ा तो नही रहा था ? बेशक मैं बड़बड़ा ही तो रहा था। और उसने अपने होंठ भीच लिये।

"शब्दो के जाल में फॅसो नही, डिकी ! ऊँची उड़ान भरने वाले गरुड़ को आखिर ज़मीन पर उतरना ही पड़ता है। नहीं, उड़ान के दौरान उसकी नज़र आसमान की तरफ नही होती, ज़मीन पर ही चिपकी रहती है।" डॉक्टर कह रहा था, "मुक्ति शब्द का कोई मतलब नही होता, डिकी। यह मात्र कल्पना की चीज़ है। मुक्ति किससे ? किसलिए ? मुक्ति का सबंध इस ठोस यथार्थ से है, डिकी, यथार्थ की पृष्ठभूमि पर ही हमें मुक्ति को समझना पड़ेगा। हमें किससे मुक्ति चाहिए ? वेट-वेट आई नो द आन्सर।[1] तुम्हें इस फ़ौजी ज़िंदगी से मुक्ति चाहिए। यह कैद, यह कैदखाना, आदमी इसमें एक बार फँस गया तो समझो, पूरा फँस गया। सदा के लिए फँस गया। मनुष्य कभी अमानवीय मशीन का पुर्जा बनकर रह नही सकता। इसलिए वह इस खोल से बाहर निकलने की पूरी कोशिश करता है। करेगा ही, लेकिन थोड़ी ही देर मे उसकी समझ में आ जाता है कि इस कैद से बाहर निकलने की कोई उम्मीद नही। वह खुद कैदी है, और खुद ही जेलर। इट इज़ हिज़ ओन मेकिंग।[2]

1. रुको-रुको, मुझे इसका उत्तर ज्ञात है।
2. यह सब खुद उसी का बनाया हुआ तो है।

"आख़िर, यह जेल भी और क्या है ? वाहर की वड़ी जेल का एक छोटा हिस्सा, एक छोटी जेल ! वाहरी ज़िदगी का अक्स ! इस विकराल यंत्र का एक अटूट हिस्सा। इस जेल से तो तुम मुक्त हो जाओगे। अपने अस्तित्व को दाँव पर लगाकर संघर्ष के लिए तैयार हो जाओगे। शायद इस फंदे से मुक्त भी हो जाओगे और इस वोझ को उतार फेंकने में प्रायः सफल भी हो जाओगे। लेकिन उसके वाद ? इससे वड़ी जेल में फँस जाओगे। फिर से संघर्ष, लड़ाई। अकेले मनुष्य की औक़ात ही क्या है ? नहीं, डिकी नहीं ! वी आर मैन ऑफ़ रीज़न, ऑफ़ रेशनैलिटी। दीवार से अपना सिर फोड़कर शहीद हो जाने से क्या फ़ायदा है ? वी मस्ट लर्न टु एडाप्ट अॅवरसेल्व्ज़।[1] माना कि इस ज़िदगी से समझौता करना मुश्किल है, लेकिन इससे नजात पाना भी मुश्किल है। हम किसी स्थिति विशेष से किस सीमा तक अपने को अडॉप्ट कर पाते हैं, यह हमारी अपनी रेशनैलिटी पर निर्भर करता है, डिकी।"

डॉक्टर रुक गया। कुछ क्षण डिकी ख़ामोश रहा। फिर कहने लगा, "डॉक्टर यह दीवार अव धँस चुकी है। इसमें दरारें पड़ गयी हैं। इस दुनिया में कोई चीज़ शाश्वत नहीं होती। कोई विचार, कोई कल्पना कोई धर्म, संस्कृति, दर्शन, समाज-व्यवस्था---कुछ भी शाश्वत नहीं होता। वास्तव में हर अशाश्वतता ही एक मात्र शाश्वत नियम होता है। लेकिन हम हैं कि शाश्वत की तलाश में लगे रहते हैं। अशाश्वत को शाश्वत समझकर अपने-आपको धोखा देते रहते हैं। डॉक्टर, इस वड़ी दीवार की नींव खिसक रही है। इस वात को हम नज़रअंदाज़ करते जाते हैं।"

कुछ क्षण डॉक्टर मौन रहा। फिर कहने लगा, "वेल ! परहैप्स यू आर राईट। लेकिन, ख़ैर, अव मुख्य सवाल पर आयें, अपने वचपन के वारे में कुछ कहो। यहाँ आने से पहले तुम क्या करते रहे हो ? तुम्हारा ट्रेड तो ऑपरेटर का है। तुम्हारा रेकॉर्ड भी वहुत अच्छा है। इसलिए, तुममें यह जो दोष पैदा हुआ है नया तो नहीं हो सकता। इसकी जड़ पुरानी ही होगी। पिछले एक-दो वरसों में कोई ख़ास घटना तो नहीं हुई ?"

डिकी अपने अतीत के वारे में कुछ वताने को तैयार नहीं था। अतीत

1. हमें स्वयं को हालत के साथ समझौता करना सीख लेना चाहिए।

अब ख़त्म हो चुका था। उसे कभी का दफ़ना दिया गया था। [illegible]
अहम नहीं थी कि उसका अतीत रेगिस्तान की तरह उजाड़ [illegible]
हुआ था, या हरी-भरी वनराइयों से ढंका था। उस प्रदेश को वह [illegible]
छोड़ चुका था। इसलिए वह सब-कुछ अब महत्व नहीं [illegible]
रास्ता चलते-चलते पैरों में छाले पड़ गये थे, कि कँटीली [illegible]
पार करते वक़्त तलुवों से ख़ून निकला था, कि [illegible]
पड़ गये थे या दूसरी ओर, नर्म हरियाली पर [illegible]
मिला था। अतीत के उस हिस्से पर वह अब [illegible]
सहारे चक्कर काट सकता था, मृतात्माओं की [illegible]
तरह। और फिर इतनी दूरी से देखे जाने पर [illegible]
निर्जन टीले, झरने हरियाली, पूरा-का-पूरा [illegible]
लगेगा ही।

डिकी डॉक्टर के सवालों का जवाब देता जा रहा था। [illegible]
आता, कहता चला जा रहा था। डॉक्टर ने उसे कुछ [illegible]
एक चित्र में एक नंगा जोड़ा परस्पर आलिंगन [illegible]
गया था। पास एक प्रौढ़ नंगी औरत का चित्र था। [illegible]
जोड़े को कुछ इशारा कर रही थी। इस चित्र [illegible]
'टेस्टों' का पता था। रोगी की मनोवैज्ञानिक जाँच [illegible]
का उपयोग किया जाता था। डॉक्टर ने कुछ और [illegible]

डिकी को पता था कि [illegible]
डॉक्टर को बेवकूफ़ बनाना मुश्किल नहीं था। [illegible]
लिए चिकित्सक की [illegible]
जिक संबंधों का उसका [illegible]
बिना इन टेस्टों का कोई [illegible]
रहा था। काफ़ी देर [illegible]
"डिकी, मुझे कुछ [illegible]

डिकी ने [illegible]
आता। चेहरे पर [illegible]
ठीक नहीं है। [illegible]

कहा, "मैं तुम्हें कुछ दिनों के लिए अंडर ट्रीटमेंट रखना चाहता हूँ। मेरा ख़याल है, कुछ दिनों का आराम और माहौल में परिवर्तन तुम्हारे लिए लाभदायक सिद्ध होगा। तुम कभी-कभी बिना वजह ओवर-एक्साइट हो जाते हो। लेकिन, कोई बात नहीं। यह दोष थोड़ी-सी कोशिश से दूर हो सकता है। वास्तव में यह तुम्हारे हाथ की बात है। तुम्हारी ऐनुअल छुट्टियाँ कितनी बाक़ी हैं? नहीं तो मैं तुम्हें मेडिकल लीव रिकमेन्ड कर दूंगा। मेरी राय है, तुम्हें छुट्टी पर चले जाना चाहिए।"

डिकी डॉक्टर की ओर देखता रहा। डॉक्टर कुछ देर के लिए मौन था। उसने अपनी जेब से एक लिफ़ाफ़ा निकाला। मन-ही-मन जैसे उसने कोई फ़ैसला कर लिया हो। कहने लगा, "मुझे पता है, डिकी, तुम मुक्ति चाहते हो। तुम्हारे लिए इस ज़िंदगी से समझौता करना संभव प्रतीत नहीं होता। इसलिए यहाँ से तुम्हारी छुट्टी कर देना ही हितकर होगा। लेकिन... वेल, तुम्हें भी पता है, मैं कुछ नहीं कर सकता। मेरे हाथ बँधे हुए हैं। तुम...तुम ऐसा करो कि छुट्टी पूरी करके जब लौट आओ तो मुझसे मिलो। देखते हैं, शायद कुछ रास्ता निकल आये।"

डिकी समझ गया। डॉक्टर उसे नाराज़ नहीं करना चाह रहा था। डॉक्टर का पत्र जेब के हवाले करके वह बाहर निकल गया।

बारह

वह बाहर आया। तब तक शाम हो चुकी थी। गली पार करके वह मेन रोड पर आया। पास की किसी फैक्टरी का भोंपू बजा। थोड़ी ही देर में आदमियों के जत्थे पीछे से आकर उससे आगे निकले जा रहे थे। ये अनगिनत लोग एक ही दिशा में शायद स्टेशन की तरफ तेज़ क़दम बढ़ाते हुए चले जा रहे थे। आपस में कानाफूसी करते हुए ये लोग ठिठुरी हुई नज़रों से सिर्फ सामने की तरफ एकटक देख रहे थे। उनके थके चेहरों पर पसीना चमक रहा था। कुछ लोग भीड़ से अलग चल रहे थे। उनके हाव-भाव से पता चलता था कि वे सहमे-सहमे हैं और आपसी बातचीत को छुपाये रखना चाहते हैं।

फ़ुटपाथ पर तीन-चार लड़कियाँ खड़ी आपस में बातें कर रही थीं, ज़ोर-ज़ोर से कहकहे लगा रही थीं। उनकी साड़ियों के पल्लू बार-बार नीचे सरके जा रहे थे। हँसने के साथ उनकी छातियाँ भी हिल रही थीं। चलते आदमियों के धक्के उन्हें लगातार लग रहे थे, लेकिन उन पर [illegible] कोई असर नहीं हो रहा था। पेड़ के पास दो-तीन नर-[illegible] [illegible] टूटे कनस्तरों में मिट्टी जमा कर रहे थे।

डिकी चला जा रहा था। उनमें से एक लड़की [illegible] तरफ़ गया। वह सहम गयी। हँसते-हँसते [illegible] कुछ तनी, बायें हाथ को झटका देकर [illegible] पल्ला सँवार लिया। उसकी गहरी [illegible]

झगड़ रहा हूँ, लड रहा हूँ। लेकिन इस विकराल यंत्र के ख़िलाफ़ मेरी लडाई क्या सही लड़ाई थी? क्योंकि, मैं लड़ तो रहा था, पर उन्ही के बनाये हुए कानून को हथियार बनाकर। उन्हो के नियमो के नियंत्रण मे रहकर। वास्तव में उन्ही के मूल्यों के तहत मैं इस यत्र का हिस्सा बन गया हूँ और अपने इस परिपुष्ट व्यक्तित्व से ज़रा भी हटे बिना इस यत्र को रोकने की कोशिश करता रहा हूँ...जब यह सघर्ष शुरू हुआ, उस समय तक तो मैं इस यत्र का ईंधन बन चुका था। उसी का हिस्सा बनकर उसकी गति को बनाये रखने में मदद कर रहा था। आई कैन नॉट डेस्ट्रॉय इट ऐंड बी ए पार्ट ऑफ इट।[1]

थैंक गॉड! मैं पुलिस में नहीं हूँ। कम-से-कम नि शस्त्र लोगो पर गोली चलाने का काम तो मुझे नही करना पडता। दुश्मन की फ़ौज के लोग निरपराध तो हो सकते हैं, लेकिन नि शस्त्र नही हो सकते। सो व्हॅट? सशस्त्र लेकिन निरपराध इसानों की हत्या करना क्या उचित है? वह आगे बढा चला जा रहा था। कहाँ चला जा रहा था, उसे पता नहीं था। बस चला जा रहा था, जैसे पीछे से उसे कोई ढकेल रहा हो। रास्ते की दुकानें फटाफट बद हो रही थी, अब वह स्वय भीड का हिस्सा बन गया था। वह उस भीड़-भाड़ और शोर-गुल के साथ चला जा रहा था।

ये थे उनके क़ानून, उन्हीं के बनाये हुए, कि खेल किस तरह खेला जाये। खेल कब बद हो, यह भी उन्ही का फैसला। खेल भी उनका, कानून भी उन्ही के और रेफ़री भी उनके! अपने खिलाफ़ जाने वाले कानून वे क्यों बनायेंगे? जीत गये तो उनकी जीत, और हार गये तो भी उन्ही की जीत। तब उनके खिलाफ़ लडने का मतलब यही हुआ न कि उन्ही के नियमों और मूल्यों के दायरे में बँधे रहो, और फिर लडो। आई मस्ट रिजेक्ट इट इन टोटॅलिटी।[2] उनके मूल्य, उनकी कल्पनाएँ, उनकी नैतिकता, उनकी प्रतिष्ठा, उनका धर्म, उनकी मानवता, उनकी सस्कृति, उनका सत्य...वह सब...वह सब-कुछ जो उनकी प्रतिष्ठा बढाता है, उस सभी को नकारना होगा।

---

1. मैं इसका एक पुर्जा बना रह कर इसे मिटा नही सकता।
2 मुझे इस सबको पूरी तरह से नकार देना चाहिए।

फ़ुटपाथ के खोमचे वाले अपना सामान बांध रहे थे। एक दुकान में से एक आदमी बाहर आया। उसने सड़क की दूसरी साइड से जाती हुई टैक्सी को रुकने के लिए आवाज़ दी। उधर जाने के लिए वह लपककर, पर घबराहट में डिकी से टकराकर गिर पड़ा। उस वक़्त वह ज़ोर से चीखा। डिकी आश्चर्य से उसकी तरफ़ देखने लगा। उस आदमी ने एक हाथ से धोती की लाँग कसकर पकड़ रखी थी, और दूसरे हाथ से बैग। वह ज़ोर-ज़ोर से हाँफ रहा था। फटी-फटी आँखों से वह डिकी की तरफ़ देखता रहा। उसके चेहरे से बेहद ख़ौफ़ टपक रहा था। एक झटके से उसने डिकी को परे किया और सड़क के दूसरे किनारे पहुँच गया। ह्वाई इज़ ही एफ़ेड ऑफ़ मी? मुझसे डर रहा था? डरपोक! पता नहीं, डिकी फ़ुटपाथ से उतरकर कब बीच सड़क पर आ गया था। अब वह कुछ युवकों से घिरा आगे बढ़ रहा था। मुट्ठियों को हवा में ताने वे लोग नारे लगा रहे थे। वह उनके शब्दों को पकड़ने की कोशिश कर रहा था।

डिकी देख रहा था कि उन युवकों के बाल बिखरे हुए थे। चेहरों पर पसीना चमक रहा था। उनकी आँखों में चमक थी। कपड़े मैले थे। वे चारों तरफ़ नज़रें घुमा रहे थे। हवा में अपने हाथों को नचाकर चीख़ रहे थे। उन नारों में पता नहीं, उन्हें कैसा संतोष, कैसी खुशी मिल रही थी! मानो ज़ोर-ज़ोर से चीख़कर नारे लगाते चले जाने पर ही उनका अस्तित्व टिका हुआ था। कुछ लोग बीच-बीच में रुक जाते, सहमे-सहमे-से इधर देखने लगते और फिर जन-समुदाय को देखकर नारे लगाना शुरू कर देते। भीड़ का वह प्रवाह अब और तेज़ी से आगे बढ़ रहा था। धीरे-धीरे वह और बड़ा होता जा रहा था। उसने मुड़कर पीछे देखा। दूर तक सिर-ही-सिर और हिलते हुए हाथ। जलूस अब बड़ी सड़क से हटकर दायीं तरफ़ की एक गली में घुस गया। सामने कुछ लोग ज़ोर-ज़ोर से नारे लगा रहे थे, और पीछे हज़ारों हाथों और हज़ारों टाँगों वाला भीड़ का यह महाकाय पशु धीमे-धीमे आगे बढ़ रहा था। डिकी ने एक बार फिर पीछे देखने की कोशिश की और पीछे वाला आदमी सीधे उस पर आ गिरा। अब डिकी भीड़ की बाढ़ में बहा चला जा रहा था। भीड़ ने मुझे कब और कहाँ घेर लिया था? कहीं मैं ख़ुद तो इस भीड़ में शरीक नहीं हुआ?

ये सब लोग अब दूसरी सड़क पर आ गये। उलटी तरफ से लोगों का एक रेला फ़ुटपाथ पर चढ़ा आ रहा था। दोनों जुलूस वहाँ की एक इमारत के सामने आकर मिल गये। एक साथ कई लोग इमारत के छोटे-से दरवाज़े में भीतर घुसने की कोशिश कर रहे थे। शोर बढ़ गया था। वे सब घबराये-से दिखायी पड़ रहे थे। अब वहाँ और कई लोग जमा हो गये थे। अचानक उस भीड़ में से चीख़ने की आवाज़ें आयीं, एक साथ कई चीख़ें। किस्सा क्या था, यह समझ आने के पहले ही आस-पास के सैंकड़ों लोग उलटी दिशा में भागने लगे। वह ख़ुद भी मुड़ गया और दौड़ने लगा। पीछे की ओर से आने वाले प्रवाह की रफ़्तार इतनी तेज़ थी कि वह गिरते-गिरते बचा। लोग भागे जा रहे थे। हर कोई भयभीत था। नारे बंद हो चुके थे। सिर्फ़ शोर बाक़ी था। किसी गुमनाम ख़ौफ़ ने इन्हें घेर लिया था। गरदन ऊँची करके उसने आगे देखने की कोशिश की। उसकी रफ़्तार कुछ धीमी पड़ गयी थी, सामने से एक आदमी इधर आ रहा था। वह ज़ोर-ज़ोर से बड़बड़ा रहा था। पुलिस का एक सिपाही उसके पीछे था। पाँच-सात लोग उसे घेरे चल रहे थे। सिपाही के कपड़े फट गये थे। किसी दुकान के पटरे पर खड़ा हुआ एक जवान लड़का मुट्ठी ताने ज़ोर-ज़ोर से कुछ कह रहा था। बालों की लटों को पीछे उछाल-उछालकर वह बोल रहा था। क्रोध के मारे उसकी आवाज़ काँप रही थी। और फिर एक बार नारों से सारा वातावरण गूँज उठा। भीड़ में फिर से आत्मविश्वास और जान पर खेलने का भाव पैदा हो गया था। मानो किसी अज्ञात शक्ति का आदेश पाकर भीड़ मुड़ गयी थी। उसने महसूस किया कि भीड़ के साथ वह भी पीछे मुड़ गया था। अनचाहे ही डिकी की मुट्ठियाँ तन गयीं।

भीड़, फिर से एक बार पलट पड़ी। अब ये लोग बड़ी सड़क पर आ गये थे। दायीं तरफ़ से और कुछ लोग आकर उसमें मिल गये। आगे पुलिस के कुछ जवान भाग रहे थे। भीड़ उनका पीछा कर रही थी। सब लोग गला फाड़-फाड़कर चीख़ रहे थे। आगे वाले हिस्से में, किसी ने पुलिस अफ़सर की टोपी हवा में उछाल दी थी। हो सकता है, कोई इन्स्पेक्टर आगे वालों के चंगुल में फँस गया हो। शायद वे लोग उसकी धुनाई कर रहे होंगे। दूर, पुलिस-वैन का सायरन बज रहा था। आवाज़ क़रीब आ रही थी।

डिकी ने ऊपर देखा, एक इमारत की चौथी मंज़िल की खिड़की से एक महिला पड़ोस की खिड़की में खड़े आदमी से कुछ कह रही थी, हाथों से इशारे कर रही थीं।

अचानक गोली चलाने की आवाज़ सुनायी दी—कान फाड़ देने वाली आवाज़, थर्रा देने वाली आवाज़। उसने आगे वाले आदमी के कंधे पर हाथ रखे और एड़ियाँ ऊँची करके सामने देखने लगा। कोई लाल-सफ़ेद चीज़ उसके सिर के ऊपर से आती दिखायी दी। उसने गरदन नीची कर ली। सिर पर हाथ रखकर वह एक तरफ़ भाग गया। भागने में किसी चीज़ से टकराकर धड़ाम से गिर पड़ा। उसी वक़्त उसके शरीर से टकरा-कर दूसरा एक आदमी परे जाकर गिरा। इस हड़बड़ी में उसकी आँखों ने पास की दुकान के पटरे के नीचे जगह तलाश ली। पूरी ताक़त लगाकर उसने उस आदमी के ऊपर से अपनी टाँगें निकाल लीं और लपककर पटरे के नीचे पहुँच गया। घुटने छाती में सिकोड़कर वह कुछ देर साँस रोके बैठा रहा। थोडी देर बाद उसने धीरे से गरदन निकालकर सामने की तरफ़ देखा। घुटनों से दर्द की एक टीस उठी और उसके दिमाग़ तक पहुँच गयी।

कुछ क्षणों के लिए उसकी आँखों के सामने अँधेरा छा गया। उसने कसकर आँखें बंद कर लीं। पसीना पोंछने के लिए माथे की तरफ़ हाथ बढ़ाया तो हाथ में भयंकर दर्द महसूस हुआ। शायद किसी का जूता उसके हाथ के पंजे पर पड़ा था, या फिर पटरे से कहीं रगड़ खा गया था। हाथ से ख़ून टपकने को था। गरदन उठाकर उसने सामने सड़क की ओर देखा। उसकी नज़रें एक स्थिर एवं निर्जीव नज़र से टकरायीं। उसके रोंगटे खड़े हो गये। शकल पहचानते उसे देर नहीं लगी। वह वही महिला थी जो कुछ देर पहले चौथी मंज़िल की खिड़की से झाँक रही थी। महिला की ठोड़ी पर आश्चर्य का भाव था। उसका प्रत्येक अंग शिथिल हो चुका था, कहीं भी ताज़गी या कसाव नहीं था। गैस के निकल जाने पर लिज़लिज़े गुब्बारे की तरह वह वहाँ पड़ी थी। पसली के पास से ख़ून निकलकर सड़क पर बह रहा था। काफ़ी देर तक उसकी आँखें ख़ून की लकीर का पीछा करती रहीं। उसे लगा, उसका अस्तित्व कण-कण टूटता हुआ ख़ून के बहाव में

घुलकर समाप्त हो गया है। पागलों की तरह वह रक्त-प्रवाह के बदलते आकारों को देखता रहा। मस्तिष्क खतरे की घंटी की सूचना दे रहा था। समूची इच्छा-शक्ति बटोरकर उसने अपनी नजरें वहां से हटा लेने की कोशिश की। माथे पर पसीने की बूंदें छलक आयी थीं। धौंकनी की तरह चलती हुई अपनी सांस को वह स्वयं भी सुन रहा था। उसकी रीढ़ कांपने लगी। तनाव असह्य था। मानो आंखों और मस्तिष्क का संपर्क टूट चुका था।

और एकाएक मन और शरीर का संपर्क फिर से जुड़ा। शरीर में हरकत हुई। दूसरे ही क्षण पेट के बल पटरे के नीचे रेंगता हुआ वह नुक्कड़ तक पहुँचा। देखा कि सड़क के उस पार पुलिस की वैन खड़ी है। गाड़ी के पास एक अफसर खड़ा था। उसकी कमर पर लटकी पिस्तौल को डिकी देख रहा था। पूरी सड़क खाली पड़ी थी। सिर्फ वैन में कुछ दूर चार-पांच पुलिस-अफ़सर जल्दी-जल्दी कुछ बातचीत कर रहे थे। वैन का रेडियो-ऑपरेटर ज़ोर-ज़ोर से ख़बर भेज रहा था। डिकी पीछे मुड़ा। अचानक किसी के चीख़ने की आवाज़ और वज़नदार जूतों की आहट एक साथ सुनायी दी। उस महिला की लाश के पास पुलिस-अफ़सर खड़ा था। एक लमहे के लिए उसकी नज़र डिकी की नज़रों से टकरा गयी। एक झटके के साथ डिकी ने अपना शरीर पटरे के नीचे से बाहर निकाला, और तीर की तरह आगे झपटा।

उधर सड़क के दूसरे किनारे खड़े हुए दस-पद्रह लोग भी उसके साथ भागने लगे। आगे लोगों का और एक जत्था भागा चला जा रहा था। पुलिस के जवान डंडे उठाये उनका पीछा कर रहे थे। डिकी भागा जा रहा था और बीच-बीच में गरदन घुमाकर इधर-उधर देखता जा रहा था। उसे किसी गली की तलाश थी, जिसमें घुसकर वह पुलिस को चकमा दे सके, वरना दोनों तरफ़ से पुलिस की कैंची में पकड़े जाने का खतरा था। उसने देखा कि बायीं तरफ की गली के किनारे एक आदमी उसकी तरफ देखकर इशारा कर रहा है। एक क्षण के लिए वह हिचकिचाया। पीछे, और लोग दौड़े चले आ रहे थे। शायद यह पीछे वालों में से किसी को बुला रहा होगा। एक आदमी ज़ोर से चिल्लाया और ज़मीन पर लुढ़क गया। पीछे

पुलिस का शोर सुनायी दे रहा था। सीटियाँ बज रही थीं। एक क्षण में डिकी ने फ़ैसला किया, पीछे से आते हुए लोगों को चकमा देकर वह आड़ी सड़क पर भागने लगा। कुछ देर तक दौड़ते रहने के बाद एक गली के पास आकर वह रुका। गरदन घुमाकर उसने पीछे देखा ही था कि किसी ने उसका कंधा पकड़कर उसे अंदर खींच लिया। बड़ी भयंकर गंध उसके नथुनों में घुसी। वह पीछे हटने ही वाला था कि उस आदमी ने एक जोरदार घूंसा लगाकर उसे भीतर ढकेल दिया। वह ख़ुद भी भीतर आ गया। वह बहुत लंबा और तगड़ा था। उसकी सफ़ेद-पीली मूँछें उसके होंठों पर झुकी थीं। उसके लाल गमछे से पता चलता था कि वह बिहारी होगा। डिकी कुछ बोलने ही जा रहा था कि उसने उसके कंधे थपथपाये और चुप रहने का इशारा किया। दो बड़ी इमारतों के बीच के गलियारे में वे खड़े थे। नीचे गटर बह रहा था। बाहर की तेज़ रोशनी से अचानक इस अँधेरी जगह में आ जाने की वजह से उसकी आँखें चुंधिया रही थीं। वह अब थक गया था। उसने दीवार से पीठ टिका दी और आँखें बंद कर लीं।

जब उसकी आँख खुली तो समझ पाना मुश्किल था कि वह किस जगह था? दीवार से टिककर खड़े-खड़े उसे नींद आ गयी थी, या भयंकर ग्लानि के कारण झपकी आ गयी थी? उसने याद करने की कोशिश की। इधर-उधर देखा। काफ़ी अँधेरा था। गली के दरवाज़े से रोशनी भीतर आ रही थी। डिकी धीमे-धीमे बाहर निकल आया। रात हो चुकी थी। सड़क की बत्तियों की रोशनी में उसने घड़ी देखी। घड़ी बंद थी।

उसने रूमाल से अपने गाल पर से आँसू पोंछे। देखा, रूमाल पर ख़ून के दाग़ पड़ गये थे। उसने ऊपर देखा। साफ़ आसमान पर चाँद चमक रहा था। वह आसमान की शोभा को खड़ा देखता रहा। आकाश की शीतलता उसकी आँखों में होकर उसके पूरे शरीर में, नस-नस में फैल गयी। वह सड़क के किनारे-किनारे चलने लगा। कुछ दुकानें अभी तक खुली थीं। दुकानों की रोशनी सड़क पर पड़ रही थी। बाक़ी अँधेरा था। शायद सड़क

की सभी बत्तियाँ तोड़ दी गयी थीं। उसके घुटनों में पीड़ा की एक लकीर दौड़ गयी।

वह आगे बढ़ा। बायीं तरफ किसी मोटर का ढाँचा जल रहा था। शोले अब भी धधक रहे थे। पुलिस के दो जवान वहाँ खड़े थे। डिकी वहाँ से खिसका। दायीं तरफ आलीशान इमारतों की खिड़कियों से सड़क पर रोशनी आ रही थी। अहाते में पानी का नल था। डिकी ने मुँह धोया। पैंट और शर्ट पर पड़े खून के धब्बे गीले रूमाल से रगड़कर साफ करने की कोशिश की। नल से पानी पिया।

वह गेट के पास आया और इधर-उधर देखकर उस स्थान के बारे में अटकल लगाने लगा। मस्तिष्क का बवंडर अब शांत हो चुका था। सभी सवालों के जवाब तो नहीं मिले थे, लेकिन उसे लगा, प्रश्नों का मूल उसकी समझ में आ गया है। अब से हर क्षण उसे इन सवालों के जवाब ढूँढ़ने होंगे! शायद कुछ सवाल सवाल ही बने रहें। लेकिन इतना वह जरूर समझ गया था कि जवाबों की तलाश कहाँ करनी है? मन का संदेह मिट चुका था।

धीरे-धीरे आवाजाही बढ़ रही थी। शहर का मुख्य इलाका अब करीब था। उस छोटे-से होटल में कुछ लोग मेज पर चाय के कप रखे बैठे थे। होटल के मालिक ने उसे देखा। गरम-गरम चाय पीने को उसका बहुत जी चाह रहा था, लेकिन वह आगे बढ़ता रहा। उसी पुरानी दुनिया में फिर एक बार चले आने का आभास उसे हुआ। दोनों तरफ़ की दुकानें खुली थीं। नुक्कड़ वाली दुकान के सामने फुटपाथ पर दो औरतें गठरियों से टिकी बैठी थीं। उनमें से एक स्त्री सिर खुजाती हुई दूसरी से चीख-चीखकर कुछ कह रही थी। शायद माँ-बेटी थीं। लड़की की छातियाँ कुछ उभरी हुई थीं। इसके अलावा कोई खास फर्क दोनों में नहीं था। लड़की की गोद में एक छोटा-सा बच्चा पड़ा हाथ-पाँव हिला रहा था। डिकी ने अपनी जेब टटोली। वह अब स्टेशन तक पहुँच गया था।

लाउडस्पीकर पर सूचना दी जा रही थी—"नौ बजकर चालीस मिनट पर आने वाली सियालदह एक्सप्रेस प्लेटफार्म नम्बर 5 पर खड़ी है। इस गाड़ी से आगे जाने वाले यात्री कृपया . !"

जेब से पैसे निकालते हुए वह बुकिंग ऑफ़िस की तरफ़ गया। उसे खिड़की के पास जगह मिली थी, इसलिए वह बहुत खुश था। गाड़ी पुल पर से गुज़र रही थी। उसने लंबी साँस लेकर बाहर की खारी हवा को फेफड़ों में भर लिया और बाहर के आसमान का नज़ारा देखने की कोशिश की। लेकिन खिड़की के सामने गुजरते हुए खंभों के अलावा और कोई चीज उसे दिखायी नहीं दी। कभी-कभी नीचे की तरफ़ काफ़ी गहराई पर चमकता हुआ पानी दिखायी देता। उसने डॉक्टर की दी हुई चिट्ठी निकाली और खिड़की के बाहर फेंक दी। हवा के ज़ोर से चिट्ठी विपरीत दिशा में उड़ गयी थी। उसने एक बार फिर अपनी जेब टटोली। 'पे बुक' निकाली। कुछ क्षण उसे ताकता रहा। फिर खोला। बायें फ़्लैप पर लगी तसवीर से लान्स-नायक डिकी का चेहरा उसकी तरफ़ देख रहा था। अपना हाथ खिड़की से बाहर करके उसने लान्स-नायक डिकी की 'पे बुक' धीरे-से नीचे गिरा दी। हवा का झोंका उसे पीछे की तरफ़ उड़ा ले गया। पहियों की खटर-पटर और इंजन की घड़घड़ाहट के बा[illegible] बुक' के पानी में गिर जाने की आवाज़ सुनने के लिए कान [illegible] मन हँसता हुआ इंजन की ओर देखने लगा।